जीवन-ज्योति माला

# मेरी क्यूरी

सन्तराम वत्स्य

जीवन ज्योति माला

# मेरी क्यूरी

सन्तराम वत्स्य

ज्ञान भारती

प्रकाशक :
ज्ञान भारती
४/१४, रूपनगर, दिल्ली-११०००७
द्वारा प्रकाशित

द्वितीय संस्करण : १९८४
मूल्य : ६·००

मुद्रक :
राज प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-११००३२

Meri Queri (Biography) by Sant Ram Vatsya Rs. 6.00
[71.2-22-884/G]

# दो शब्द

"विज्ञान की व्यक्तिगत शाखाओं और उनके विकास में योग देने वाले मुख्य वैज्ञानिकों की जीवनियों का अध्ययन विज्ञान के वास्तविक अर्थ और उसकी आत्मा को ठीक तरह समझने के लिए जरूरी है। उसके पढ़ने से हमें जो स्फुरणा प्राप्त होती है, वह प्रायः विज्ञान पर लिखे गये अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण औपचारिक ग्रन्थों से अधिक होती है।"

(चन्द्रशेखर वेंकट रामन)

नोबेल पुरस्कार विजेता जगत्-प्रसिद्ध महान् वैज्ञानिक श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन के ये वाक्य ही इस 'जीवन ज्योति-माला' की प्रेरणा हैं।

'जीवन-ज्योति-माला' की इस प्रथम लड़ी में देश-विदेश के महान् वैज्ञानिकों की जीवनियां प्रस्तुत की जा रही हैं।

वैज्ञानिक सबसे अधिक जिज्ञासु लोग होते हैं। उनके मन में अपने चारों ओर की वस्तुओं के बारे में तरह-तरह के प्रश्न उठते हैं। वे उन प्रश्नों का उत्तर खोजने के लिए अनेक पुस्तकें पढ़ते हैं, उन वस्तुओं का बारीकी से निरीक्षण और परीक्षण करते हैं। 'क्यों' और 'कैसे' का उत्तर ही हमारी सारी वैज्ञानिक खोजें हैं।

आज के युग को इन वैज्ञानिक खोजों के कारण ही 'विज्ञान का युग' कहा जाता है। इन खोजों के कारण ही आज हम अनेक सुख-सुविधाओं का उपभोग कर रहे हैं। कुछ दशक पूर्व असम्भव लगने वाली बातें आज इतनी साधारण हो गई हैं कि उनकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। रेल-मोटर, हवाई जहाज, बिजली, कैमरा, एक्सरे, सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, ग्रामोफोन, परमाणु बम और अन्तरिक्ष यान आज हमें

आश्चर्यचकित नहीं करते। पर यदि इन खोजों की कहानी आ पढ़ें तो अवश्य चकित रह जाएं। तब आपको यह भी पता चल जाएगा कि इन खोजों के पीछे अनेक वैज्ञानिकों की वर्षों की सतत साधना है। किसी वैज्ञानिक के मन में एक बात आयी और उसने परीक्षणों तथा प्रयोगों द्वारा उसका पता लगाना प्रारम्भ किया। उसी खोज को बाद के वैज्ञानिकों ने और आगे बढ़ाया और इस प्रकार अनेक वर्षों में वह कार्य पूरा हुआ। विज्ञान की एक-एक खोज में अनेक राष्ट्रों और युगों के व्यक्तियों का योग है।

ज्ञान का यह भंडार पुस्तकों में हम सबको मिल सकता है, उससे लाभ उठाकर, हम नई खोजों और विज्ञान के नए चमत्कारों की दिशा में आगे से आगे बढ़ सकते हैं।

पुस्तकों में संचित ज्ञान का लाभ उठाकर, इसे सीढ़ी बनाकर नए आविष्कारों और खोजों तक पहुंचने वाला आगामी युग का वैज्ञानिक कौन होगा ? वह आप भी हो सकते हैं।

इन जीवनियों को पढ़कर यह स्पष्ट पता चल जायगा कि वैज्ञानिक खोजें संयोगमात्र या किसी चमत्कार पर आधारित न होकर वर्षों के अथक परिश्रम का परिणाम हैं। इन जीवनियों को पढ़कर जहां हमें विज्ञान के सम्बन्ध में अनेक बातों का पता लगेगा; वहां उन गुणों से भी परिचय होगा, जिनके कारण वैज्ञानिक सफल हो सके।

विज्ञान के जिज्ञासुओं और छात्रों के लिए वैज्ञानिकों के जीवन-चरित्रों का अध्ययन बड़े महत्त्व का है। कुछ शिक्षा-शास्त्रियों का तो यह मत है कि विज्ञान की प्रारम्भिक शिक्षा वैज्ञानिकों के जीवन-चरित्रों द्वारा ही शुरू होनी चाहिए।

पाठकों की रुचि विज्ञान में बढ़े, वे जीवन में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएं और निरीक्षण और परीक्षण के अभ्यस्त बनें, इस आशा और विश्वास के साथ मैं इसे प्रस्तुत करता हूं।

— सन्तराम वत्स्य

मान्या का जन्म ७ नवम्बर, १८६७ को पोलैंड देश के 'वारसा' नगर में हुआ था। उसके माता-पिता दोनों अध्यापन का कार्य करते थे। यह परिवार रुपए-पैसे वाला तो नहीं था, पर दोनों जने कमाते थे इसलिए घर का खर्च चल जाता था। मान्या के पिता स्क्लोदोवस्की लड़कों के हाई स्कूल में गणित और विज्ञान पढ़ाते थे। मान्या की मां लड़कियों के जिस स्कूल में पढ़ाती थीं, वह बहुत नामी स्कूल था। धनी-मानी नागरिकों की बच्चियां इसी स्कूल में पढ़ती थीं। स्कूल के पास ही उन्हें रहने को जगह मिली हुई थी। उनका विवाह हुए आठ वर्ष हो चले थे और उनके पांच बच्चों में मान्या सब से छोटी थी।

बच्चों की देख-भाल ठीक से हो, यह सोचकर मान्या की मां ने नौकरी छोड़ दी। यह सन् १८६८ की बात है। अब उन्हें घर भी बदलना पड़ा। उन्होंने नार्थ स्ट्रीट में, जहां एम० स्क्लोदोवस्की पढ़ाते थे, एक मकान किराए पर ले लिया और वहीं रहने लगे। मान्या की मां अब सारा समय बच्चों की देख-रेख और घर

को संभालने में लगाने लगीं। वे बड़ी समझदार महिला थीं, सुशिक्षित और सुसंस्कृत। संगीत में भी उनकी रुचि थी।

मान्या की मां का स्वास्थ्य ठीक नहीं था। डाक्टरों ने उन्हें आराम करने की सलाह दी थी। पर पांच बच्चों की मां को आराम कहां मिल पाता! पहले वे दोनों जने कमाते थे। अब एक की कमाई पर ही सारी गृहस्थी का खर्च चलाना पड़ रहा था। इसके अतिरिक्त दवा-दारू में भी काफी खर्च हो जाता था। उनके दिन तंगी से गुज़र रहे थे। अपने रोग की परवाह न करते हुए मान्या की मां दिनभर घर के काम-काज में जुटी रहतीं। उनका रोग बढ़ता गया, बढ़ता गया। यह कोई मामूली रोग नहीं था। डाक्टरों ने बताया था कि उन्हें क्षय रोग हो गया है और फेफड़ों में खराबी पैदा हो गई है। छूत के साथ लगने वाले इस रोग से अपने पति और बच्चों को बचाए रखने के लिए मान्या की मां कड़े नियमों का पालन करतीं और अपने उपयोग की वस्तुओं को अलग ही रखतीं।

उन दिनों पोलैंड पर रूस का शासन था। रूस का शासक जार अपने अत्याचारों के लिए प्रसिद्ध था। परतंत्रता की बेड़ियां तोड़ने के लिए पोलैंड के देशभक्त

जितने भी प्रयत्न करते, उन्हें कठोरता से कुचल दिया जाता था। पोलैंड के विद्यालयों में वहां की भाषा पोलिश पढ़ाने की मनाही कर दी गई थी। उसके स्थान पर रूसी पढ़ाई जाती। पोलैंड का इतिहास पढ़ना, वहां के महापुरुषों की बात करना, सब कुछ मना था। सारे पोलैंड में रूस के जासूस उच्च सरकारी पदों पर बैठे हुए थे। वहां के बच्चों को रूस का राष्ट्रगीत गाने के लिए विवश किया जाता। उन्हें जार और रूस की प्रशंसा करना सिखाया जाता। जो कोई इसका विरोध करता उसे कठोर दण्ड मिलता।

पोलैंड के बुद्धिमान लोग इन सारी कठिनाइयों का सामना करते हुए भी स्वदेश की स्वतंत्रता के लिए लुके-छिपे कार्य करते रहते। इनमें अध्यापक, पादरी आदि प्रमुख थे। वे रूसी अधिकारियों के दुर्व्यवहार को सहन करते हुए भी नई पीढ़ी में स्वतंत्रता की चाह को जगाते रहते।

## पाठशाला में

पाठशाला में पढ़ना प्रारंभ करने पर मान्या अपनी पैनी समझ और अच्छे स्वभाव के कारण अध्यापिकाओं

की स्नेह-पात्र बन गई। वह अपना पाठ याद करना कभी न भूलती। प्रश्नों के उत्तर ठीक-ठीक देती और कभी छुट्टी भी नहीं लेती। अध्यापिका जब प्रश्न पूछती और कोई भी लड़की ठीक उत्तर नहीं दे पाती तो अन्त में वही प्रश्न मान्या से पूछा जाता। मान्या प्रश्न का ठीक उत्तर देती और बैठ जाती। वह अपनी कक्षा की लड़कियों में सबसे छोटी थी। फिर भी, जब परीक्षा होती तो वही प्रथम आती। उसकी स्मरण-शक्ति बड़ी तेज थी। वह किसी कविता को दो-चार बार पढ़ती और सारी कविता उसे याद हो जाती। यों वह शरारत करने में भी कम नहीं थी। इन्हीं शरारतों के कारण अध्यापिका कभी-कभी उसे दण्ड भी देती थी। पर उस के गुणों में ये छोटी-मोटी शरारतें छिप जातीं और सभी अध्यापिकाएं उसके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करतीं।

पोलैंड की भाषा और इतिहास पढ़ाने की रूसी अधिकारियों ने मनाही कर रखी थी, फिर भी लुके-छिपे वहां की देशभक्त अध्यापिकाएं बच्चियों को दोनों चीज़ें पढ़ातीं।

एक दिन एक अध्यापिका पोलैंड के इतिहास के बारे में प्रश्न पूछ रही थी। मान्या उत्तर दे रही थी।

इतने में मध्यम-सी आवाज़ में बिजली की घंटी

बज उठी ।

अध्यापिका और छात्राएं जानती थीं कि इस घंटी बजने का अर्थ क्या है । यह कोई छुट्टी की घंटी नहीं थी । घंटी की आवाज़ सुनते ही सारी कक्षा में पोलिश भाषा की पुस्तकें इकट्ठी कर ली गईं और चार लड़कियां उन्हें अपने एप्रिनों में डालकर फुर्ति के साथ कमरे से बाहर निकल गईं । वे उन पुस्तकों को सुरक्षित स्थानों में छिपाकर लौट आयीं और अपने स्थान पर यों चुपचाप बैठ गईं जैसे कुछ हुआ ही न हो । यह बिजली की-सी तेजी से हुआ । सभी लड़कियों ने रूसी भाषा की पुस्तकें निकाल लीं और पढ़ने लगीं ।

इतने में कक्षा का किवाड़ धीरे से खुला और पाठशाला का रूसी निरीक्षक भीतर आया । रोबीला चेहरा, बढ़िया सूट-बूट । वह सतर्क आंखों से चारों ओर देख रहा था जैसे कुछ खोज रहा हो ।

अध्यापिका की मेज़ पर रूसी भाषा की पुस्तक रखी थी, जैसे वह इसी पुस्तक में से पढ़ा रही हो ।

निरीक्षक के भीतर घुसते ही अध्यापिका और छात्राएं उठ खड़ी हुई थीं । अध्यापिका ने उन्हें बैठने के लिए कुर्सी दी । अध्यापिका अपनी घबराहट को छिपाने का यत्न कर रही थी । सभी लड़कियां भी

सहमी हुई थीं।

वह थोड़ी देर रुककर बोला, "तुम ज़ोर-ज़ोर से क्या पढ़ा रही थीं ? तुम्हारी मेज़ पर यह कौन-सी पुस्तक है ?"

अध्यापिका ने नम्रता से उत्तर दिया, "यह रूसी परी-कथाओं की प्रसिद्ध पुस्तक है।"

यह रूसी निरीक्षक तो वास्तव में इस बात का पता लगाने आया था कि पाठशाला में कहीं चोरी-चोरी पोलिश भाषा और पोलैंड का इतिहास तो नहीं पढ़ाया जाता है।

उसने अचानक एक डेस्क को खोल डाला पर उसमें कुछ भी नहीं मिला।

निरीक्षक कुर्सी पर बैठ गया। उसने अध्यापिका से कहा कि कक्षा से किसी एक लड़की को यहां बुलाइए।

सहमी हुई मान्या ने अपना मुंह यों फेर लिया कि अध्यापिका की नज़र उस पर न पड़े और उसे रूसी के पास जाने से छुट्टी मिले। पोलैंड के सभी बच्चे रूसियों से घृणा करते थे और उनके क्रूर व्यवहार से परिचित थे। पर मान्या को यह भी पता था कि उसी को पुकारा जाएगा। कारण स्पष्ट था। एक तो

वह सभी प्रश्नों का सही-सही उत्तर दे सकती थी और रूसी भाषा बड़ी अच्छी तरह बोल लेती थी।

अध्यापिका ने मान्या का नाम पुकारा। वह अपने स्थान से उठकर निरीक्षक के पास आ खड़ी हुई। वह दस साल की बच्ची डरी और सहमी हुई थी।

निरीक्षक ने बड़े रूखे स्वर में उसे प्रार्थना सुनाने को कहा। मान्या को प्रार्थना याद थी। तोते की तरह उसने बिना गाए वह सुना दी। फिर उसने और प्रश्न पूछे, "पिछले पांच जारों (बादशाहों) के नाम बताओ जिन्होंने हमारे पवित्र रूस पर शासन किया है?"

उसने सब नाम ठीक-ठीक बता दिए।

इस छोटी बच्ची से अपने प्रश्नों के ठीक उत्तर सुनकर निरीक्षक बहुत प्रसन्न हुआ। उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि पोलैंड के बच्चों के मस्तिष्क में रूस की गुलामी ठूँसी जा रही है। परन्तु उसका यह सन्तोष झूठा था। उसे बुरी तरह मूर्ख बनाया जा रहा था। देशभक्ति की लौ एक-एक बच्चे के मन में जगी हुई थी। यह तो परतंत्रता की विवशता थी कि उन्हें रूसी पढ़नी पढ़ रही थी। स्वतंत्रता की चिंगारी भीतर ही भीतर सुलग रही थी।

अन्त में निरीक्षक ने प्रश्न पूछा, "हम पर कौन

शासन करता है ?"

मान्या ने तुरन्त उत्तर नहीं दिया। तो क्या उसे इस प्रश्न का उत्तर आता नहीं था ? नहीं, यह बात नहीं है। वह उत्तर जानती थी। पर उसका स्वाभिमान एक विदेशी को अपना शासक कहने से रोक रहा था। उसके चेहरे का रंग पीला पड़ गया। फिर उसने रुक-रुककर जार का नाम और उपाधियां बता दीं। उसे ऐसा लग रहा था जैसे उसने कोई ऐसी बात कह दी हो जो उसे नहीं कहनी चाहिए थी। उसे रूसी जार को अपना शासक बताने में बड़ी लज्जा लग रही थी।

ऐसे ही देशभक्त बच्चों के बल-बूते पर देश गुलामी का जुआ उतार फेंकते हैं और स्वतंत्र हो जाते हैं।

निरोक्षक उसके उत्तरों से संतुष्ट होकर दूसरी कक्षा में चला गया।

हेली और मान्या की चाची लूसिया उन्हें लेने आयी हुई थी। हेली चाची को निरीक्षक के आने और उसे बुद्धू बनाने की कहानी सुना रही थी, पर मान्या गंभीर और गुमसुम थी।

उसकी मां की बीमारी दिनोंदिन बढ़ रही थी। पानी बदलने के लिए वह नाइस चली गई थीं, परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। वह पहले से भी दुबली होकर

लौटीं और उनके बचने की बहुत कम आशा रह गई।

इन्हीं दिनों एक और विपत्ति सिर पर टूट पड़ी। मान्या के पिता स्क्लोदोवस्की जिस स्कूल में पढ़ाते थे, उसका प्रिंसिपल इवानोव उनके देशभक्तिपूर्ण स्वतंत्र विचारों के कारण उनसे नाराज़ रहता था। उसने उन्हें नौकरी से हटा दिया। नौकरी छूट जाने से वह मकान भी उन्हें खाली करना पड़ा।

स्क्लोदोवस्की ने दूसरी जगह कम वेतन पर नौकरी कर ली और दूसरे मकान में रहने लगे। घर के खर्च में उन्हें कटौती करनी पड़ी।

घर का खर्च पूरा करने के लिए उन्होंने कुछ विद्यार्थियों को अपने घर में रखकर पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। वे विद्यार्थी वहीं रहते, वहीं खाते और वहीं पढ़ते। इस तरह आठ-दस लड़कों को घर में रखने के कारण घर में भीड़-भाड़ रहने लगी। घर का शान्त वातावरण एकदम बदल गया। हर समय हो-हल्ला, काम की भरमार, मां के ऊपर मंडराती मौत की छाया, सभी ने मिलकर घर का सुख-चैन नष्ट कर दिया।

इन्हीं दिनों मान्या की बड़ी बहन जोज़िया एक भयंकर रोग से ग्रस्त होकर चल बसी। दूसरी बहन ब्रोन्या भी बीमार पड़ी हुई थी। सारे घर में शोक

छाया हुआ था। बचपन की इन घटनाओं ने मान्या को अपनी उम्र की लड़कियों की अपेक्षा अधिक सयानी बना दिया था। उसके बचपन की हँसी-खुशी को छीन लिया था।

मान्या की स्मरण-शक्ति बहुत अच्छी थी। स्कूल की पढ़ाई में उसे अधिक समय नहीं लगाना पड़ता था। खाली समय में वह कहानियों की दूसरी पुस्तकें पढ़ती या कोई कविता याद करती।

मान्या को प्रातः जल्दी उठना पड़ता था। कारण यह था कि जहां वह सोती, उसी कमरे में उसके पिता से पढ़ने वाले शिक्षार्थी चाय आदि पीने के लिए आ जाते थे।

मान्या का बाल-मन अपनी मां की बीमारी की भयंकरता को समझने लगा था। यद्यपि मान्या की मां सदा इस बात का प्रयत्न करतीं कि बच्चों पर उसकी बीमारी और संभावित मौत का कोई प्रभाव न पड़े परन्तु मान्या अनुभव करती थी कि घर में कोई भयानक बात होने वाली है।

९ मई को मान्या की मां ने अपनी मृत्यु की घड़ी निकट आयी जानकर पादरी को बुला भेजा। पादरी ने अन्त समय के धार्मिक कृत्य पूरे किए। पर रोगिणी

फिर भी शान्त बनी रही। उसे अपने पति और बच्चों से असमय बिछुड़ने का गहरा दुःख था जिसे वह प्रकट नहीं कर रही थी।

बच्चे मां के बिस्तर के चारों ओर जमा थे। किसी तरह शक्ति जुटाकर उसने बच्चों को प्यार के दो शब्द कहे। यही उसके अन्तिम शब्द थे।

सारा परिवार शोक में डूब गया। बच्चे आज मातृ-विहीन हो गए। उनकी प्यारी मां उन्हें छोड़कर सदा के लिए चली गई। उन्हें घर सूना लग रहा था।

मान्या के पिता इस बात का प्रयत्न करते थे कि बच्चों को मां का अभाव न खले। वे उनकी खूब देख-भाल करते पर मां के अभाव को पिता कहां भर सकता है!

## यौवन के द्वार पर

स्क्लोदोवस्की परिवार के दिन फिरने लगे। कर्तव्य-परायण और स्नेहशील पिता ने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य का समुचित प्रबन्ध किया। मेहनती और समझदार बेटे-बेटियों ने मन लगाकर अपनी पढ़ाई की और वे अपने सहपाठियों में सबसे योग्य निकले।

मान्या का भाई जोसेफ सुन्दर और स्वस्थ किशोर था। उसने स्कूल की पढ़ाई समाप्त कर ली थी। स्कूल की अन्तिम परीक्षा में विशेष योग्यता दिखाने के कारण उसे सोने का पदक पुरस्कार के रूप में मिला था। सबसे बड़ी बहन ब्रोन्या स्कूल की पढ़ाई समाप्त कर चुकी थी। उसे भी पुरस्कार में सोने का पदक मिला था। अब वह घर की देखभाल करती थी। घर के खर्च का हिसाब रखना, घर की सारी व्यवस्था करना और पिता से पढ़ने वाले शिक्षार्थियों की देखभाल करना आदि काम उसके जिम्मे थे। वह अपने जिम्मे के सारे काम को सुघड़ गृहिणी की तरह करती। इससे उसके पिता पर काम का बोझ कुछ कम हो गया। मझली बहन हेला परिवार में सबसे सुन्दर थी। उसका छरहरा लम्बा कद बड़ा आकर्षक था। वह अभी सिकोर्सका स्कूल में पढ़ रही थी। सबसे छोटी मान्या पन्द्रहवें वर्ष में पहुंच गई थी। उसका शरीर कुछ भारी था पर थी बड़ी फुर्तीली।

जोसेफ विश्वविद्यालय में डाक्टरी पढ़ रहा था। ब्रोन्या कालेज में दाखिल नहीं हो सकती थी। उन दिनों वारसा विश्वविद्यालय में लड़कियों को प्रवेश नहीं दिया जाता था। लड़कियां ऊंची शिक्षा नहीं पा

सकती थीं। लड़कियों को कालेज में प्रवेश न मिलने के कारण ब्रोन्या मन मसोस कर रह गई। वह स्कूल की सबसे योग्य छात्रा थी। वह सोचती कि यदि मैं लड़का होती तो कितना अच्छा होता। खूब पढ़ती और नाम कमाती। दूसरी बहनों को भी यह चिन्ता खाए जा रही थी कि स्कूल की पढ़ाई के बाद आगे क्या होगा! उनके अपने देश में लड़कियों को उच्च शिक्षा वर्जित थी और विदेशों में जाकर पढ़ने के लिए उनके पास धन नहीं था।

मान्या को उसके पिता ने सरकारी स्कूल में प्रवेश दिला दिया था। देश से बहार जाकर किसी विश्व-विद्यालय में पढ़ने के लिए यह आवश्यक था। इसके बिना तो कहीं भी कालेज में प्रवेश नहीं मिलता। इस स्कूल में पढ़ाने वाले सभी रूसी और जर्मन थे। वे बड़ा कड़ा व्यवहार करते। इस स्कूल में एक अध्यापिका थी। उसका नाम था 'मेयर'। वह नाटे कद, काले रंग और गुस्सैल स्वभाव की थी। पोलिश छात्रों का देश-प्रेम तो उसे फूटी आँखों नहीं सुहाता था। फिर भला तेज-तर्रार मान्या से उसकी कैसे पटती। मान्या चोरी-छिपे उसका मज़ाक उड़ाती और उसे घृणा की दृष्टि से देखती थी। वह मान्या को झिड़कने का कोई न

कोई बहाना ढूंढती रहती और अवसर मिलने पर दो-चार खरी-खोटी सुना देती।

इन्हीं दिनों रूस के जार अलैक्जैंडर द्वितीय के वध का समाचार आया। मान्या और उसकी सहेलियां इस समाचार से खूब प्रसन्न थीं। उनकी प्रसन्नता देखकर जर्मन अध्यापिका और चिढ़ गई।

मान्या की एक अन्तरंग सहेली थी कज़िया। वे दोनों प्रायः स्कूल में साथ-साथ आतीं और साथ ही घर लौटतीं। रास्ते में एक पार्क था। दोनों वहां घंटों बैठी बातें करती रहतीं।

यह स्कूल का अन्तिम वर्ष था। सन् १८८३ के जून मास में स्कूल परीक्षा का परिणाम निकला। सब से ज्यादा अंक मिले मान्या को। विशेष योग्यता के लिए उसे स्वर्णपदक मिला। आज उसके पिता और भाई-बहनों की प्रसन्नता का क्या ठिकाना। जोसेफ और ब्रोन्या पहले ही स्वर्णपदक प्राप्त कर चुके थे। तीसरा पदक मान्या को मिला। उनके मन में आया काश! आज मां जीवित होतीं!

पढ़ाई में मान्या ने दिन-रात एक कर दिया था। और उस परिश्रम का सुफल उसे मिल गया था। उसके पिता ने यह निश्चय किया कि वह एक वर्ष गांव

में रहकर आराम करेगी। उसके बाद उसे क्या करना है, इसका निश्चय किया जाएगा।

मान्या वारसा नगर से दूर एक गांव में अपने सम्बन्धियों के यहां रहने चली गई। उसे एक वर्ष की छुट्टी मिल गई थी। वह यौवन में प्रवेश कर रही थी। उसके शरीर-मन का विकास हो रहा था। यहां आ कर हर समय पुस्तकों में खोई रहने वाली इस लड़की ने पुस्तकों को छुआ तक नहीं। पढ़ने को उसका जी नहीं करता। मान्या को वहां काम-धाम नहीं करना पड़ता। बस कुछ देर वह बच्चों को पढ़ा देती।

साल भर गांव में रहकर मान्या वापस आ गई। यह जुलाई, १८८४ की बात है। इन्हीं दिनों मैडम डी० फ्लूरी एक्लोदोवस्की से मिलने आईं। वे मान्या की मां की शिष्या रह चुकी थीं। वे पोलिश थीं और उन्होंने एक फ्रांसीसी से विवाह कर लिया था। जब उसे पता लगा कि लड़कियों का इन छुट्टियों में कोई निश्चित कार्य-क्रम नहीं है तो उन्होंने दो महीने की छुट्टियां उनके साथ गांव में बिताने का निमंत्रण हेला और मान्या दोनों बहनों को दिया।

छुट्टियों के मौज-मज़े के बाद दोनों बहनें वारसा लौट आईं। प्रोफेसर स्क्लोदोवस्की ने इस बीच मकान

बदल लिया था और कुछ नये निश्चय कर डाले थे। उन्होंने शिष्यों को घर में रख कर पढ़ाना बन्द कर दिया। हाई स्कूल की नौकरी से जो वेतन मिलता था, उसी में गृहस्थी चलाने का निश्चय किया। इस निश्चय से घर की आय में कमी तो हुई परन्तु भीड़-भाड़ छूट जाने और काम कम हो जाने से सभी को अच्छा लगा। घर के वातावरण में गंभीरता आई और शांति दिखाई देने लगी।

कभी-कभी बूढ़े स्क्लोदोवस्की को इस बात का खेद अवश्य होता कि वे इतना धन भी नहीं जुटा पाए जिससे अपनी होनहार बेटियों को विदेश में भेजकर ऊंची शिक्षा दिला सकते।

मकान का किराया, नौकर का वेतन और घर का खर्च बड़ी कठिनाई से पूरा होता था। अतः स्पष्ट था कि सबको अपना-अपना खर्च चलाने के लिए कुछ काम-धन्धा करना होगा। वे बच्चों को पढ़ाने का काम कर सकते थे। यही करने का उन्होंने निश्चय किया। काम खोजा जाने लगा। यद्यपि जीविका का प्रश्न मुख्य था और सभी भाई-बहन उसे हल करने के लिए प्रयत्नशील थे, पर मात्र यही उनके जीवन का उद्देश्य नहीं था। देश को स्वतंत्र कराने

और देखने की साध सबके मन में थी और वे मातृ-भूमि की सेवा करना चाहते थे।

इन्हीं दिनों ब्रोन्या और मान्या ने आधुनिक विचारों की महिलाओं से सम्पर्क बढ़ाना प्रारम्भ किया और उनकी सहायता से एक चल-विश्वविद्यालय में भर्ती हो गईं। यह पढ़ाई चोरी-छिपे होती थी। कभी किसी छात्र के घर में और कभी किसी अध्यापक के घर में। आठ-दस छात्र कहीं इकट्ठे हो जाते और अध्यापक उन्हें पढ़ा देता और नोट्स लिखवा देता। इस तरह विभिन्न वैज्ञानिक विषयों की शिक्षा उत्साही और होनहार युवक-युवतियां प्राप्त करने लगे। पर पुलिस का खतरा हर घड़ी बना रहता और इस बात की आशंका रहती कि न मालूम कब पकड़ लिए जाएं और जेल में बन्द कर दिए जाएं।

इस विश्वविद्यालय का उद्देश्य दोहरा था। एक तो नवयुवकों की शिक्षा को आगे बढ़ाना और बाद में उन्हें दूसरों को पढ़ाने योग्य बनाना। मान्या ने निर्धन स्त्रियों को शिक्षा देने का काम संभाला। कपड़े बनाने की एक दुकान में उसने मजदूरों को पढ़ाना आरम्भ कर दिया। मजदूरी करने वाली स्त्रियों के लिए उसने एक छोटा-सा पुस्तकालय भी बना लिया।

ब्रोन्या और मान्या इकट्ठी बैठकर अपने भावी जीवन की योजना बनातीं। उनकी साध उच्च शिक्षा प्राप्त करने की थी पर वारसा में रहकर यह सम्भव नहीं था और विदेश जाकर पढ़ने के लिए धन जुटाने की समस्या थी। यहां एक घंटा पढ़ाने का पारिश्रमिक एक शिलिंग मिलता था। इससे धन कैसे जुटता। मान्या का भाई जोसेफ डाक्टरी पढ़ रहा था। हेला ने गायिका बनने का निश्चय कर लिया था। इन दोनों के जीवन का लक्ष्य एक तरह से सुनिश्चित हो गया था पर ब्रोन्या और मान्या अभी अधर में ही लटक रही थीं। मान्या को वृद्ध पिता की भी चिन्ता थी। ब्रोन्या को स्कूल छोड़े चार वर्ष हो चले थे और वह परिवार को संभाल रही थी। पर वह इतने भर से संतुष्ट नहीं थी और कुछ महत्वपूर्ण कार्य करना चाहती थी। उसकी इच्छा थी कि पेरिस जाकर चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन करे। पर समस्या तो पेरिस की पढ़ाई का खर्च जुटाने की थी। यद्यपि मान्या की इच्छा भी यही थी कि पेरिस में जाकर विज्ञान पढ़े किन्तु वह अपने लिए कुछ करने से पहले बड़ी बहन के लिए कुछ करना चाहती थी। मां की मृत्यु के बाद ब्रोन्या ने उसकी देख-भाल की थी। इस तरह वह मां की

स्थानापन्न, बड़ी बहन और सहेली सभी कुछ थी।

एक दिन मान्या ने ब्रोन्या से कहा, "मैंने पिताजी से सलाह करके एक योजना बनाई है और मैं समझती हूं कि उस योजना के अनुसार काम करने पर हम अपने उद्देश्य को पूरा कर सकती हैं।"

ब्रोन्या ने उत्सुकता से पूछा, "बताओ तो तुमने क्या योजना बनाई है ?"

"अच्छा पहले यह बताओ कि तुमने अब तक जितने रुपये जोड़े हैं, उनसे पेरिस में पढ़ने का कितने महीनों का खर्च चल सकता है ?" मान्या ने पूछा।

"पेरिस जाने और वहां एक वर्ष रहने का खर्च उन रुपयों से चल सकता है।" ब्रोन्या ने उत्तर दिया, "पर डाक्टरी की पढ़ाई में पांच वर्ष लगते हैं। बाकी चार वर्ष के खर्चे का क्या होगा ?"

"हां, यह तो ठीक है। देखो, यदि हम अपनी-अपनी बात सोचती रहीं तो कुछ नहीं होगा किन्तु मिल कर प्रयत्न करें तो तुम सर्दियों में पढ़ने के लिए पेरिस जा सकती हो।" मान्या ने पहेली-सी बुझाते हुए कहा।

"अरी, तू पागल तो नहीं हो गई है।" ब्रोन्या ने कहा।

"नहीं मैंने सब कुछ सोच लिया है। पहले वर्ष का

खर्च तुम अपने जमा रुपयों से चला लोगी। उसके बाद तब तक मैं जो कुछ बचा पाऊंगी, वह तुम्हें भेज दूंगी। पिताजी भी हमारी सहायता करेंगे। मैं कुछ न कुछ अपनी पढ़ाई के लिए भी जमा करती रहूंगी। जब तुम डाक्टर बन जाओगी तो मैं पढ़ने चली जाऊंगी और तुम मेरी सहायता कर सकोगी।" मान्या ने अपनी योजना बता दी।

ब्रोन्या छोटी बहन की योजना के महत्व को समझ रही थी। मान्या की त्याग भावना और बड़ी बहन के भविष्य की चिन्ता से ब्रोन्या की आँखें छल-छला आईं। उसने कहा, "क्या तुम समझती हो कि तुम अपना निर्वाह करके और कुछ मेरी सहायता के लिए रखकर, अपनी पढ़ाई के लिए भी कुछ जोड़ सकोगी।"

"हां, क्यों नहीं!" बड़ी लापरवाही से मान्या ने उत्तर दिया, मैंने जो कुछ कहा है, बहुत सोच-विचार कर कहा है। मुझे शीघ्र ही एक परिवार में शिक्षिका का काम मिलने वाला है। खाना, रहना और धुलाई के खर्च के अतिरिक्त ४० या ५० पौंड वार्षिक मिल जाएंगे। हमारी योजना बिल्कुल ठीक चलेगी।"

ब्रोन्या को पहले तो यही बात अखरी कि वह छोटी बहन की सहायता करने की अपेक्षा उससे सहायता

लेगी। दूसरे उसे इस बात का खेद था कि उसके कारण मान्या को पांच वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। उसने कहा, "मैं पहले क्यों जाऊं ? पढ़ने में तुम मुझसे भी अधिक योग्य हो। पहले तुम्हीं चली जाओ न ?"

"वाह ! कैसी समझदारी की बात कर रही है मेरी बहन। जानती हो तुम्हारी और मेरी उमर में कितना अन्तर है। तुम बीस से ऊपर की हो और मैं अभी सत्रह की। आज तुम्हारी उमर जितनी है, उतनी उमर होने तक मेरी बारी भी आजाएगी। और प्रतिभा में भी तुम मुझसे कम नहीं हो। तुमने ही तो पहले स्वर्ण पदक जीता था।" मान्या ने उसकी बात काटते हुए कहा।

मान्या की बात को काटने के लिए ब्रोन्या के पास कोई उत्तर नहीं था।

मान्या को वारसा में ही एक धनी परिवार की लड़कियों को पढ़ाने का काम मिल गया। उसने बड़े उत्साह से इसे स्वीकार कर लिया परन्तु उसकी कल्पना के विपरीत वे लोग बड़े दम्भी, मूर्ख और झगड़ालू निकले। बच्चियां जिद्दी स्वभाव की और उद्दण्ड थीं। यद्यपि मान्या चाहती थी कि वह वारसा में रहे जिससे पिता से मिलने और गुप्त चल-

विश्वविद्यालय का अध्ययन चालू रखने की सुविधा रहे परन्तु इन लोगों के साथ निभाना उसके लिए कठिन हो गया।

उसने नगर से बाहर एक गांव में एक अन्य धनी परिवार की लड़कियों को पढ़ाने का काम स्वीकार कर लिया और वारसा वाली नौकरी छोड़ दी। यहां पचास पौंड वार्षिक वेतन था और नगर की अपेक्षा खर्च कम था। पहली जनवरी, १८८६ को वह इस नौकरी पर रवाना हो गई। अपने परिवार से बिछुड़कर जाने से उसका मन उदास-उदास था। फिर भी स्टेशन पर जब तक उसके पिता रहे, वह प्रसन्न रहने का प्रयत्न करती रही। गाड़ी में उदास-अकेली बैठी वह नए मालिक के बारे में और नई जगह के बारे में तरह-तरह की बातें सोचती रही।

सात घंटे की यात्रा के कारण वह थकी हुई थी। गृहस्वामी लम्बे-चौड़े डीलडौल का रोबीला व्यक्ति था। उसकी पत्नी उदास, भावशून्य चेहरे वाली, रूखी-सी। बच्चे इस नई शिक्षिका को उत्सुक आंखों से जांच-परख रहे थे।

गर्म-गर्म चाय और सत्कारपूर्ण शब्दों से मान्या का स्वागत हुआ। कुछ देर बाद मालकिन श्रीमती ज़ेड

मान्या को पहली मंजिल पर स्थित उसके कमरे में ले गई जो मान्या के लिए निश्चित किया गया था। मान्या अपने सामान को रखकर सुस्ताने लगी।

अगले दिन उसने पढ़ाने का काम प्रारम्भ कर दिया। यहां उसे दो लड़कियों को पढ़ाना पड़ता। बड़ी लड़की ब्रोंका उसकी ही उमर की थी और मान्या की सहेली बन गई थी। दूसरी लड़की एंदाजिया दस वर्ष की थी। मान्या को दिन में सात-आठ घंटे काम करना पड़ता। पर ये लोग ठीक-से ही थे, इस लिए वह यहां प्रसन्न थी।

गृहस्वामी जमींदार और एक चीनी मिल में भागीदार थे। गांव में चुकन्दर की खेती होती थी, जिससे चीनी बनाई जाती थी। मिल के आस-पास मजदूरों की झोंपड़ियां थीं। फटे-पुराने कपड़े पहने मजदूर लड़के और लड़कियां काम पर आते-जाते उसे दिखाई देते। मकान बड़ा खुला था। एक सुन्दर बगीचा भी उसके साथ था। कुल मिलाकर यह जगह और यहां के लोग भी मान्या को पसन्द थे।

पढ़ाने के बाद जो समय बचता उसमें वह स्वयं भी कुछ पढ़ती। वारसा में वह गुप्त विश्वविद्यालय में पढ़ने के साथ-साथ मजदूर स्त्रियों को पढ़ाती भी थी।

यहां के फटेहाल मजदूरों को देखकर पढ़ा-लिखाकर उनकी हालत सुधारने का विचार उसके मस्तिष्क में कौंध गया।

उसने मालिक की बड़ी लड़की ब्रोंका से जो उसकी शिष्या और सहेली भी थी, मन की बात कह सुनाई। इस नए विचार को सुनकर ब्रोंका बहुत प्रसन्न हुई और मजदूरों को पढ़ाने के कार्य में सहयोग देने के लिए तैयार हो गई। मान्या ने उसे समझाया कि इस काम को हाथ में लेने से, सरकार हमें दण्डित कर सकती है।

ब्रोंका ने मजदूरों को पढ़ाने-लिखाने की बात अपने माता-पिता से की। उन्होंने इस योजना को सराहा और स्वीकृति दे दी।

गांव के अठारह बच्चे पढ़ने के लिए तैयार हो गए। मान्या प्रतिदिन दो घंटे उन्हें पढ़ाती। इस काम में ब्रोंका उसकी सहायता करती।

एक ओर तो मान्या शिक्षिका बनी दूसरों को पढ़ा रही थी और दूसरी ओर उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उस की इच्छा रह-रहकर जाग उठती। पेरिस का सारबोन विश्वविद्यालय उसकी कल्पना में साकार हो उठता और वह उस दिन के लिए बेचैन हो उठती जब वह वहां जाने के लिए गाड़ी में यात्रा कर रही होगी। पेरिस में

पढ़ सकने की उसकी आशा दिनों-दिन क्षीण होती जा रही थी। परिस्थितियां उसके अनुकूल नहीं थीं। उसे वृद्ध पिता की याद सताती जिन्हें इस बुढ़ापे में वह सहारा देना चाहती थी। पेरिस में पढ़ रही ब्रोन्या की उसे सहायता करनी थी। इतने पर भी विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने की आशा-आकांक्षा का उसने पूर्ण रूप से परित्याग नहीं किया। वह चीनी मिल के पुस्तकालय से विज्ञान और समाजशास्त्र की पुस्तकें लाकर पढ़ती रहती। पिता को वह नियमित रूप से पत्र लिखती रहती और अनुभवी वृद्ध पिता अपनी पुत्री को उचित सलाह देता रहता।

मान्या की अवस्था इस समय विवाह योग्य हो चली थी। उसका सौन्दर्य निखर आया था और वह बड़ी आकर्षक दिखती थी। जब श्री ज़ैड का सबसे बड़ा पुत्र कैसीमिर छुट्टियों में वारसा विश्वविद्यालय से घर आया तो बहनों की इस नवयुवा शिक्षिका के सौन्दर्य ने उसे आकर्षित किया। दोनों एक-दूसरे को चाहने लगे। दोनों ने विवाह के बन्धन में बंधने का निश्चय कर लिया। इस विवाह-सम्बन्ध में किसी को कोई रुकावट नज़र नहीं आती थी। घर के सभी लोग मान्या के कार्य और व्यवहार से सन्तुष्ट थे।

कैसीमिर ने मान्या से विवाह करने की बात अपने माता-पिता को बताई और उनकी स्वीकृति चाही। परन्तु इस प्रस्ताव से वे दोनों बहुत नाराज़ हुए। उन्हें यह कतई अच्छा नहीं लगा कि उनका बड़ा बेटा एक ऐसी लड़की से विवाह करे जिसे शिक्षिका का काम करके अपनी जीविका चलानी पड़ रही हो। आस-पास के किसी भी धनी-मनी परिवार की लड़की से वे अपने पुत्र का विवाह-सम्बन्ध करना चाहते थे। कैसीमिर का यह प्रस्ताव उन्हें पागलपन जैसा लगा।

कैसीमिर दब्बू स्वभाव का था। माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध मान्या से विवाह करने को वह तैयार नहीं हुआ।

मान्या को इस प्रकार के व्यवहार से आश्चर्य और क्षोभ हुआ। उसकी प्रेम-बेल पर तुषारापात हो गया। वह मुर्झाई-सी और निरुत्साहित दिखने लगी। उसने इस प्रथम प्रेम के कटु प्रसंग को भूलने का प्रयास किया पर कहां भुला पाई! इसकी कसक उसके हृदय में बहुत दिनों तक बनी रही।

जीवन पुरानी लीक पर चलता रहा। मान्या जैड परिवार की बच्चियों को और गांव के बच्चों को पहले ही की तरह मनोयोग से पढ़ा रही थी। उसने अपना

रसायन विज्ञान का अध्ययन भी जारी रखा।

मान्या को यहां पढ़ाते हुए तीन वर्ष हो चले थे। जैड परिवार को निकट भविष्य में उसकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं रहेगी। उसके पिता सरकारी नौकरी से सेवा निवृत्त हो गए थे और पेंशन पाने लगे थे। उन्हें अच्छे वेतन पर दूसरी जगह काम मिल गया था। अब वे ब्रोन्या को प्रतिमास कुछ रुपये भेज सकने की स्थिति में थे। उधर पेरिस से ब्रोन्या ने मान्या को पत्र में लिखा था कि अब वह उसे रुपया न भेजा करे। उसने पिता से भी प्रार्थना की थी कि आप मुझे जो राशि भेजते हैं, उसमें से पांचवां भाग निकाल कर मान्या के लिए जमा करते रहिए ताकि जब वह पढ़ने के लिए पेरिस आए तो उसके काम आ सके। ये सारी बातें मान्या के लिए आशा बंधाने वाली थीं। उसने पेरिस में पढ़ने का जो सपना मन में पाल रखा था, उसके पूरा होने के दिन पास आते दिखाई देते थे।

ब्रोन्या ने लिखा था कि वह कठोर परिश्रम कर रही है और परीक्षाओं में पास होती जा रही है। उसकी अपने एक सहपाठी, सुन्दर और प्रतिभा-सम्पन्न पोलैंड वासी नवयुवक कैसीमिर दलूस्की से मैत्री हो गई थी और अब वे एक-दूसरे को चाहने लगे थे।

मान्या ने दूसरी जगह काम करने का निश्चय किया और शीघ्र ही उसे एक धनी महिला एफ० के घर नौकरी मिल गई।

मार्च, १८९० में उसे ब्रोन्या का एक पत्र मिला। उसने लिखा था :

"यदि सब ठीक चलता रहा तो छुट्टियां शुरू होने पर मेरा विवाह कैसीमिर से हो जाएगा। इसके बाद हम एक वर्ष पेरिस में और रहेंगे ताकि मैं अपनी अंतिम परीक्षा दे सकूं।

" "तुम हमारे पास रह सकोगी। जब हम पेरिस से चले जाएंगे तो पिताजी को तुम्हें अधिक रुपया भेजना पड़ेगा। इस सम्बंध में तुम्हें शीघ्र ही निश्चय कर लेना चाहिए। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि दो वर्ष में तुम्हें मास्टर की डिग्री मिल जाएगी।" रुपया जोड़कर उसे सुरक्षित रखना और किसीको भी उधार मत देना"'

किन्तु मान्या के मन में अब विदेश जाकर पढ़ने के लिए पहले जैसा उत्साह नहीं रहा था। इसके कई कारण थे। पिता बूढ़े हो चले थे और मान्या को वह अपने पास रखना चाहते थे। बड़ा भाई जोसेफ पैसे की तंगी के कारण अपना चिकित्सालय नहीं खोल पा रहा

था। हेला की सगाई होकर टूट गई थी क्योंकि पिता के पास मुंह मांगा दहेज देने के लिए रुपया नहीं था।

उसे ब्रोन्या का पत्र मिला कि तू शीघ्र चली आ, देर मत कर। तू हमारे साथ रह सकेगी। किराए का प्रबन्ध करके और कुछ आवश्यक सामान साथ लेकर चली आ ताकि यहां कुछ खरीदना न पड़े।

इस पत्र को पढ़कर मान्या पेरिस जाने के लिए तैयार हो गई। आवश्यक सामान बंध गया।

पिता उसे स्टेशन पर छोड़ने गए। गाड़ी छूटते समय उसने वृद्ध पिता को आश्वासन देते हुए कहा, "मैं ज्यादा देर तक आपसे दूर नहीं रहूंगी। बस, यही कुल दो वर्ष। पढ़ाई पूरी होते ही मैं आपके पास लौट आऊंगी और फिर हम कभी अलग नहीं होंगे।"

पिता ने उसे सफलता का आशीर्वाद देते हुए गीली आंखों से विदा किया।

गाड़ी चल पड़ी तो भविष्य की चिन्ताओं ने मान्या को आ घेरा।

ब्रोन्या का पति कैसे स्वभाव का है, नई जगह, नया काम, रुपए-पैसे की तंगी, इस तरह की बातें सोचते-सोचते वह यात्रा पूरी हुई।

# पेरिस में

वारसा से पेरिस तक की यात्रा से थकी हुई वह पेरिस के स्टेशन पर उतरी। आज उसने सुख की सांस ली। पोलैंड पर रूस का शासन होने से और पोलैंडवासियों पर तरह-तरह के अत्याचार होने के कारण, वारसा में उसे घुटकर रहना पड़ता था। आज एक स्वतंत्र देश की भूमि में पदार्पण करके वह रूसी दमन चक्र के खूनी पंजों की पकड़ से दूर चली गई थी। यहां की प्रत्येक वस्तु उसे अनोखी और चित्ताकर्षक लग रही थी। यहां न तो कोई भाषा बोलने पर पाबन्दी थी और न कोई पुस्तक पढ़ने पर। स्वतंत्रता का अपना एक निराला ही आनन्द होता है, और वह आनन्द आज मान्या को प्राप्त था।

मान्या लाचील नामक निर्धनों की एक बस्ती में ब्रोन्या और उसके पति के साथ रहने लगी।

मान्या विश्वविद्यालय के विज्ञान विभाग में पहुंची। नोटिस बोर्ड पर लिखा था—

**सारबोन में अध्यापन कार्य ३ नवम्बर, १८९१ को प्रारम्भ हो जाएगा।**

इस विश्वविद्यालय में विज्ञान की शिक्षा पाने का उसका स्वप्न पूरा होने जा रहा था। कुछ दिनों बाद

वह इस विश्वविद्यालय की छात्रा होगी। विश्व-विद्यालय में फ्रांसीसी ढंग से उसका नाम मेरी स्क्लो-डोवस्की लिखा गया। 'मान्या', 'मेरी' हो गई।

मेरी को अपने बीच पाकर ब्रोन्या और कासीमिर दलूस्की की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था।

कासीमिर दलूस्की का घर पोलैंड के देशभक्तों का केन्द्र था। वे लोग वहां इकट्ठे होते और अपने देश को स्वतंत्र कराने की बातें सोचा करते। प्रायः प्रतिदिन शाम को कुछ लोग आते। मेरी को भी उनकी बात-चीत में सम्मिलित होना पड़ता। शाम का समय इन बैठकों में लग जाता। दोनों बहनें वर्षों बाद मिलीं थीं। उनकी बातें ही समाप्त नहीं होतीं!

उसकी पढ़ाई वर्षों से छूटी हुई थी। वारसा में वह लुके-छिपे व्याख्यान तो सुन लेती थी पर वैज्ञानिक-प्रयोगों और परीक्षणों के लिए कोई सुविधा नहीं थी। इस कमी को उसे अपने परिश्रम से पूरा करना था ताकि वह दूसरे सहपाठियों से पिछड़ न जाए। एक और कठिनाई भी थी। वह पोलिस, रूसी, फ्रैंच, जर्मन, और अंग्रेज़ी जानती थी। पर यहां आकर पता लगा कि बोल-चाल की फ्रैंच को वह पूरी तरह नहीं समझ पाती है। इस कमी को भी उसे पूरी करना था। विश्व-

विद्यालय घर से दूर होने के कारण जाने-आने में भी उसका बहुत समय खर्च होता था। किराए-भाड़े के पैसे भी लगते थे। इसलिए मेरी ने सोचा कि विश्व-विद्यालय के आस-पास ही कहीं कमरा लेकर रहना चाहिए। उसने एक कमरा देखकर तय भी कर लिया पर बहन-बहनोई उसे अपने से अलग करने को तैयार नहीं थे। किसी तरह समझा-बुझाकर उनसे अनुमति मिली। निर्धन कलाकारों और विद्यार्थियों के क्यार्ते-ल्यातां नामक मुहल्ले में, एक मकान की छठी मंजिल पर एक बरसाती मेरी ने किराए पर ले ली। इस बरसाती में न धूप आती थी और न हवा, पर सस्ते किराए पर इससे अच्छी जगह नहीं मिल सकती थी। बस, यहां कोई लाभ की बात थी तो यह कि उसकी पढ़ाई में विघ्न डालने वाला कोई नहीं था।

सहपाठी छात्र इस लजीली और परिश्रमशीला लड़की से प्रभावित होते। उसकी सादी वेश-भूषा, विदेशीपन लिये उच्चारण से उनका ध्यान उसकी ओर खिंचता। वे आपस में भौतिकी की इस प्रतिभा-शालिनी छात्रा के बारे में बातें करते।

मेरी बड़े उत्साह के साथ पढ़ने-लिखने में व्यस्त रहने लगी। परीक्षा ज्यों-ज्यों पास आती गई, उसने

पढ़ने में ज्यादा समय लगाना प्रारम्भ कर दिया। खाने-पीने तक की सुध उसे न रहती। भयंकर सर्दी में भी घर को गर्म रखने के लिए आग जलाना तक भूल जाती। खाना बनाने में समय खर्च होगा, यह सोचकर वह केवल चाय पीकर रह जाती। होटल में जाकर खाने में अधिक खर्च बैठता, इसलिए वहां भी नहीं खाती। इसका प्रभाव उसके शरीर पर पड़ने लगा और वह निर्बल-क्षीण होती गई। एक दिन वह कालेज में बेहोश हो गई। उसकी सहेली इससे घबरा उठी। उसने उसके बहन-बहनोई को सूचित किया। बहनोई कैसीमिर भागा-भागा उसके घर पहुंचा। उसने घर में चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। वहां उसे न तो कोई भोजन सामग्री दिखायी दी और न ही भोजन पकाने का कोई चिह्न। उसे सोचते देर नहीं लगी कि मेरी नियमित रूप से भोजन नहीं करती है।

जब कैसीमिर ने पूछा कि तुमने आज क्या खाया है, तो वह कुछ बता नहीं पाई और टालमटोल करने लगी। कैसीमिर को क्रोध आ गया। उसने मेरी को आवश्यक पुस्तकें और सामान ले लेने को कहा और उसे अपने साथ अपने घर ले आया। घर पहुंचते ही उसने ब्रोन्या को कुछ समझाया। ब्रोन्या मेरी के लिए

भोजन बनाने लगी। कैसीमिर तो स्वयं डाक्टर था ही। उसने मेरी को दवाई दी। पौष्टिक भोजन और दवाई से मेरी दो दिन में ही स्वस्थ हो गई। परीक्षा निकट आ रही थी, इसलिए कुछ दिन बाद ही वह फिर अपने कमरे में लौट आई। बहन-बहनोई ने उसे यह वायदा करने पर ही वहां से आने दिया कि भविष्य में वह अपने स्वास्थ्य और भोजन के बारे में उचित ध्यान देगी और लापरवाही नहीं बरतेगी।

१८९३ का जुलाई मास आ गया। परीक्षाएं प्रारम्भ हो चुकी थीं। उसके सभी प्रश्न-पत्र अच्छे हुए थे। अब परीक्षा-परिणाम की प्रतीक्षा थी।

निश्चित दिन को वह परीक्षा परिणाम सुनने गई। सबसे पहले उसी का नाम बोला गया। वह प्रथम आई थी। आज वह बेहद प्रसन्न थी। बधाई देने आने वालों का तांता लग गया। किसीने सोचा भी नहीं था कि यह विदेशी लड़की जो बड़ी तंगी से पेरिस में रह कर पढ़ रही थी, इस तरह बहुतों को पीछे छोड़ जाएगी।

इसके बाद विश्वविद्यालय की छुट्टियां हो गयीं। मेरी स्नेहशील पिता से मिलने के लिए व्याकुल हो उठी और वारसा जाने की तैयारी करने लगी। उसने

अपना सामान बांधकर एक सहेली के घर रख दिया जो छुट्टियों में पेरिस में ही रहने वाली थी। मेरी ने कमरा खाली कर दिया ताकि इन महीनों का किराया न देना पड़े।

तीन महीने की छुट्टियां उसने पोलैंड में मजे से बिताईं। वह अपने सभी सम्बंधियों से मिलने गई। सभी ने उसका खूब आदर-सत्कार किया। उसका स्वास्थ्य फिर निखर चला। चेहरे पर ताजे गुलाब-जैसी रंगत आ गई।

जब छुट्टियां समाप्त होने को आयीं तो फिर पेरिस लौटने के लिए खर्चा जुटाने में बड़ी कठिनाई सामने आई। उसे लगा कि वह अब पेरिस नहीं लौट सकेगी, किन्तु उसकी एक सहेली जिसने पेरिस में उसकी सहायता की थी और इन दिनों वारसा में ही थी, फिर उसकी सहायता करने को तैयार हो गई। उसकी सहायता से योग्यता के आधार पर पोलैंड की सरकार ने आगे अध्ययन चालू रखने के लिए मेरी को साठ पौंड वार्षिक सहायता देना स्वीकार कर लिया।

अब वह आगे अध्ययन के लिए पेरिस रवाना हो गई। उसने फिर एक कमरा किराए पर ले लिया। यह भी छठी मंजिल पर था। उसके पास सर्दियों में पहनने

और ओढ़ने के लिए पर्याप्त कपड़े नहीं थे। कमरे को गर्म रखने के लिए अंगीठी के कोयलों का खर्च भी उसे भारी पड़ता था। सर्दी से बचने के लिए एक रात उसने खूब कपड़े पहन लिए और बाकी पहनने के कपड़ों को अपने ऊपर डाल लिया, फिर भी जब सर्दी नहीं हटी तो अपनी कुर्सी को खींचकर अपने ऊपर डाल लिया ताकि उसके दबाव से कुछ गर्माहट मिल सके। सर्दी इतनी अधिक थी कि बर्तन में रखा पानी सबेरे तक जम जाता था।

इस तरह भूख-प्यास और सर्दी-गर्मी सहती हुई यह नवयुवती अपने अध्ययन में लगी हुई थी।

## जीवन-साथी

दूध का जला छाछ को भी फूँक-फूँक कर पीता है। जब से ज़ैड दम्पति ने अपने पुत्र कैसीमिर के साथ मान्या के विवाह सम्बन्ध को इसलिए अस्वीकृत कर दिया था कि वह निर्धन है, तबसे विवाह की बात भी सोचना मेरी ने छोड़ दिया था।

मेरी को राष्ट्रीय उद्योग प्रोत्साहन समिति ने विभिन्न इस्पातों की चुम्बकीय शक्तियों का

अध्ययन करने के लिए कहा। इस कार्य के लिए उसे एक कमरे की आवश्यकता थी। उसके एक पोलिश मित्र ने, एक वैज्ञानिक पियरी क्यूरी से कमरा दिलवाने के उद्देश्य से मेरी की भेंट करा दी। इस प्रकार पियरी क्यूरी और मेरी का प्रथम परिचय हुआ। पियरी क्यूरी एक नवयुवक फ्रांसीसी वैज्ञानिक था। वह भौतिक और रसायन विज्ञान स्कूल में कार्य करता था। इस समय उसकी उमर पैंतीस वर्ष थी और मेरी की छब्बीस वर्ष। यह १८९४ की बात है। पर देखने में पियरी क्यूरी कम उमर का दीखता था। मेरी को वह कम उमर का ही लगा। दोनों का विषय विज्ञान था। वे इस पर चर्चा करते। धीरे-धीरे वे एक- दूसरे के मित्र बन गए। पहली भेंट में ही दोनों एक-दूसरे को चाहने लगे।

पियरी ने बातों ही बातों में मेरी से पूछा कि क्या अब तुम सदा फ्रांस में रहोगी ? मेरी ने आगामी परीक्षा में सफलता के बाद पोलैंड वापस लौट जाने का विचार कह सुनाया। वह अपने देश में रहकर ही कुछ सेवा-कार्य करना चाहती थी।

पियरी क्यूरी को यह बात जरा विचित्र-सी लगी कि विज्ञान की प्रतिभाशालिनी छात्रा विज्ञान के

बाहर अपनी शक्ति क्यों लगाना चाहती है। इसे तो विज्ञान की सेवा को ही अपना जीवन-व्रत बनाना चाहिए।

पियरी क्यूरी की वैज्ञानिक प्रतिभा आश्चर्यजनक थी। उसने अठारह वर्ष की अल्प अवस्था में ही 'मास्टर आफ साइन्स' की डिग्री प्राप्त कर ली थी। उन्नीसवें वर्ष में वह विज्ञान-संकाय की प्रयोगशाला का सहायक नियुक्त हुआ था। उसने अपना शोध-कार्य जारी रखा था। वह १८८३ में भौतिकी और रसायन-विज्ञान विद्यापीठ की प्रयोगशाला का प्रमुख बन गया था। इस युवा वैज्ञानिक की प्रसिद्धि देश की सीमाओं को लांघकर विदेशों में पहुंच चुकी थी। वह विज्ञान विषय पर लिखता भी था। उसका मस्तिष्क कवियों जैसा कल्पनाशील था। उसका कहना था कि 'मनुष्य को अपने जीवन को एक स्वप्न बना लेना चाहिए और फिर उस स्वप्न को सत्य में परिवर्तित कर देना चाहिए।'

पियरी ने एक भेंट में मेरी से पूछा कि क्या मैं तुम्हें मिलने तुम्हारे घर पर आ सकता हूं? मेरी ने अपना पता बता दिया।

मेरी के घर आकर पियरी से मेरी की आर्थिक

दुर्दशा छिपी न रही, पर इस निर्धनता ने उसकी नजरों में मेरी का मूल्य और महत्व और भी बढ़ा दिया।

दिन बीतते गए और दोपहर बाद की छाया की तरह उनकी मित्रता बढ़ती गई। दोनों एक-दूसरे की सलाह मानने लगे। मेरी के जोर डालने पर पियरी क्यूरी ने चुम्बकत्व से संबंधित अपने सभी प्रयोगों को लिख डाला। इस शोध को उसने डाक्टर आफ साइंस की उपाधि के लिए प्रस्तुत कर दिया और इस शोध पर उसे उपाधि मिल गई।

एक दिन जब पियरी मेरी के पास बैठा था, बातें करते हुए उसने कहा, "मैं चाहता हूं कि तुम एक बार मेरे माता-पिता से मिलो। मैं उनके साथ साक्स में रहता हूं। यह जगह पेरिस से बहुत दूर नहीं है। वे लोग बड़े अच्छे स्वभाव के हैं।

कुछ सप्ताह बाद छुट्टियां होने वाली थीं और मेरी पौलैंड लौट जाने वाली थी। शायद वह लौटकर न आए, इस आशंका से पियरी ने कहा, "यदि तुम लौटकर नहीं आईं, तो तुम्हारा आगे का अध्ययन रुक जाएगा। अब तुम्हें विज्ञान की अवहेलना नहीं करनी चाहिए।"

मेरी ने उसकी बातों के पीछे छिपे उसके मन के

भाव को ताड़ लिया था। वह बोली, "तुम ठीक ही कह रहे हो। वापस आने में मुझे प्रसन्नता ही होगी।"

वे दोनों घंटों बैठकर आपस में बातें करते। विज्ञान के बारे में, अपने-अपने भविष्य के बारे में और न जाने क्या-क्या!

पियरी ने मेरी के सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। उत्तर में मेरी चुप्पी साधे रही। एक विदेशी से विवाह करके अपने परिवार और देश को छोड़ना मेरी को निरा स्वार्थ-जैसा लगा। इससे न तो उसका बुढ़ापे में पिता की सेवा-सहायता करने का विचार पूरा होता था और न ही देश-भक्ति की भावना को सन्तोष मिलता था।

एम० एस-सी० गणित की परीक्षा में मेरी सफल रहीं। उसने द्वितीय स्थान प्राप्त किया था। मेरी भविष्य के अनेक सपने देखती हुई पोलैंड चली गयी।

पियरी क्यूरी और मेरी में निरन्तर पत्र-व्यवहार होता रहा। पियरी अपने पत्रों में विवाह के लिए जोर डालता रहा। मेरी ने उसके विवाह सम्बन्धी प्रस्तावों का कभी भी उत्साहवर्द्धक उत्तर नहीं दिया।

छुट्टियां समाप्त होने से पूर्व लिखे अपने पत्र में

मेरी ने पियरी क्यूरी को सूचित किया कि वह पेरिस आ रही है।

इस सूचना से पियरी का मन खिल उठा। उसने उत्तर में अपनी प्रसन्नता का उल्लेख मेरी से किया।

अक्तूबर में छुट्टियां समाप्त होते ही मेरी पेरिस पहुंच गई। पियरी ने फिर विवाह का प्रस्ताव स्वीकार करने के लिए उस पर जोर डाला। जब उसने देखा कि मेरी अपने देश पोलैंड से सदा के लिए बाहर रहने को तैयार नहीं है तो उसने पोलैंड में जा बसना स्वीकार कर लिया। पर मेरी जानती थी कि पोलैंड जैसे पर-तंत्र देश में पियरी क्यूरी जैसे विज्ञान-प्रतिभा के धनी का भविष्य अन्धकारमय हो जाएगा। पियरी मेरी के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को प्रस्तुत था। अब इस प्रस्ताव को टालने के लिए उसके पास कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं था। उसने इस बारे में बड़ी बहन ब्रोन्या से सलाह ली।

जब पियरी को पता लगा तो वह भी ब्रोन्या से मिला। ब्रोन्या इस विवाह सम्बन्ध के लिए सहमत हो गई।

पियरी ने ब्रोन्या को मेरी को साथ लेकर अपने माता-पिता से मिलाने का कार्यक्रम बनाया

तीनों जने साक्स स्थित पियरी के घर पहुँचे।

पियरी के माता-पिता ने ब्रोन्या और मेरी का हार्दिक स्वागत किया। बात-चीत के बाद पियरी की माँ ब्रोन्या को एक ओर ले गई और बोली, "तुम अपनी छोटी बहन को समझा देना, इस पृथ्वी पर मेरे पियरी जैसा दूसरा कोई नहीं है। किसी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा वह पियरी के साथ अधिक प्रसन्न रहेगी।"

पियरी ने धीरे-धीरे अपने मधुर, शिष्ट और सौम्य व्यक्तित्व से मेरी के हृदय को जीत लिया। दोनों ही यह अनुभव करने लगे थे कि वे एक-दूसरे के बिना सुखी नहीं रह सकेंगे। मेरी ने विवाह के लिए अपनी स्वीकृति दे दी। रत्नपारखी ने रत्न को खोजा और पा लिया।

मेरी के परिवार वाले इस सम्बन्ध से प्रसन्न हुए। जोसेफ ने इस संबंध के लिए अपनी मंगल-कामनाएं लिख भेजीं।

२६ जुलाई, १८९५ को प्रातः अपने एकान्त कमरे से मेरी सोकर उठी। अकेले रहने का आज उसका अन्तिम दिन था। उसने अपने सुन्दर-मुलायम बाल संवारे और नीले रंग के वे कपड़े पहने जो

कैसीमिर की माँ ने उसे दिए थे। इस साधारण वेश-भूषा में भी वह खूब सुन्दर दिख रही थी।

पियरी उसे लेने गया। वे स्टेशन तक बस की छत पर बैठकर गए। चारों ओर धूप फैली हुई थी और वे प्रसन्न-प्रसन्न बातें करते अपने परिचित स्थानों पर दृष्टि डालते जा रहे थे।

आज का दिन बड़ा सुहावना, बड़ा भाग्यशाली था। यह केवल पियरी और मेरी के लिए ही भाग्य-शाली नहीं था, समूचे विज्ञान जगत और मानव-मात्र के लिए भी भाग्यशाली था, क्योंकि आज के दिन दो युवा वैज्ञानिक विवाह-सम्बन्ध मे बंधने वाले थे। उनके पारस्परिक सहयोग से विज्ञान की महान् उप-लब्धियां होने वाली थीं। मानवता को नया वरदान मिलने वाला था। संसार के रोग-शोक में कमी होने वाली थी।

साक्स के सिटी-हाल में उन दोनों का विवाह सम्पन्न हुआ। इस शुभ अवसर पर क्यूरी के माता-पिता, मेरी के बहन-बहनोई, मेरी के पिता एम० स्क्लोदोवस्की और बहन हेला और दोनों परिवारों के मित्र और स्नेही उपस्थित थे।

एम० स्क्लोदोवस्की ने अपने समधी से कहा, "मेरी

के रूप में आपको ऐसी पुत्री मिल रही है जो आपके स्नेह की अधिकारिणी होगी। इसने आज तक मुझे कभी कोई कष्ट नहीं दिया।

इसके बाद लोगों ने एक-दूसरे से विदा ली। नवदम्पति अपनी नई साइकलों तक गए। ये साइकलें एक सम्बन्धी ने उन्हें उपहार में दी थीं। आने वाले मौज-मजे और सैर-सपाटे के दिनों में इन्हीं साइकलों पर सवार होकर वे निकलते थे।

बचपन की मान्या स्क्लोदोवस्की, विश्वविद्यालय की छात्रा मेरी स्क्लोदोवस्की, विवाह के बाद मेरी-क्यूरी बन गई। पिता के कुल का नाम छोड़ कर पति के कुल का नाम अपनाया।

छुट्टियां सैर-सपाटे में बिताने के बाद अक्तूबर में यह नवविवाहित जोड़ी तीन कमरों में रहने लगी। दो कुर्सियों और एक मेज के अतिरिक्त उनके पास कोई फर्नीचर नहीं था। मेज पर विज्ञान की पुस्तकें, तेल का लैम्प और एक फूलदान शोभा पाने लगा।

मेरी खाना पकाने में चतुर नहीं थी पर इस कमी को उसने कुछ पुस्तकों की सहायता से और कुछ ब्रोन्या की सास से सीखकर पूरा कर लिया। वह घर के खर्च का हिसाब भी रखती।

पियरी को पांच सौ फ्रांक (फ्रांस का सिक्का) वेतन मिलता था। क्योंकि मेरी घर का सारा काम स्वयं करती थी, इसलिए यह राशि उनके लिए पर्याप्त थी।

मेरी आगे विश्वविद्यालय में तब तक नहीं पढ़ सकती थी, जब तक वह विश्वविद्यालय का सदस्य (फैलों) होने का डिप्लोमा न प्राप्त कर लेती।

मेरी की व्यस्तता बढ़ चली थी। उसे गृहस्थी की व्यवस्था के साथ-साथ अपनी पढ़ाई की तैयारी भी करनी पड़ती और पियरी के साथ प्रयोगशाला में काम भी। सुबह का समय वह पियरी की प्रयोगशाला में काट देती। वहां से वापस आते समय वह सब्जी-भाजी और दूसरी आवश्यक चीजें खरीद लाती।

फैलोशिप की परीक्षा में मेरी सर्वप्रथम आई। विवाह के दूसरे वर्ष १२ सितम्बर, १८९७ को मेरी ने एक बच्ची को जन्म दिया। उन्होंने उसका नाम रखा आइरीन। प्रसव से पूर्व और बाद के दिनों में भी मेरी अपने शोध-कार्य में अधिक समय न दे सकी। यद्यपि यह स्वाभाविक था, पर वह निराश हो उठी।

कुछ दिनों बाद छोटी बच्ची की देख-भाल के लिए उन्होंने एक नर्स रख ली। फिर भी वह बच्ची की देख-

भाल में रुचि लेती।

कुछ मास बाद ही राष्ट्रीय उद्योग प्रोत्साहन समिति द्वारा सौंपे गए कार्य : विभिन्न इस्पातों की चुम्बक शक्ति का विवरण उसने प्रस्तुत किया। यह उसका सर्वप्रथम अनुसंधान था।

इन दिनों मेरी का स्वास्थ्य गिरने लगा था। उनका पारिवारिक चिकित्सक जानता था कि मेरी की मां की मृत्यु क्षय रोग से हुई है अतः उसे डर था कि दुर्बलता के कारण क्षयरोग न आ घेरे। उसने स्वास्थ्यवर्धक स्थान में जाकर कुछ दिन विश्राम करने की सलाह दी। किन्तु मेरी ने यह सलाह नहीं मानी। वह पति, नन्ही बच्ची और अपने कार्य को छोड़कर जाने के लिए तैयार नहीं थी।

## रेडियम की खोज

फैलोशिप प्राप्त कर लेने के बाद मेरी को डाक्टरेट की डिग्री के लिए किसी एक विषय को चुनकर उस पर शोध-प्रबन्ध लिखना था।

इस शोध प्रबन्ध का विषय क्या हो ? वह विभिन्न वैज्ञानिकों के शोध-प्रबन्धों की छान-बीन कर रही

थी ताकि कोई ऐसा अछूता विषय मिल जाए जिस पर अभी तक खोज न हुई हो। वह किसी ऐसी वैज्ञानिक गुत्थी को सुलझाना चाहती थी, जिसे अभी तक कोई सुलझा न सका हो। यह कोई सरल काम नहीं था। विषय चुनने के काम में उनके पति पियरी क्यूरी भी पूरी सहायता कर रहे थे।

ऐक्स किरणों की खोज तब तक हो चुकी थी। इससे अपारदर्शक चीज़ों के आर-पार देखने की शक्ति प्राप्त हो गई थी और रोगों का निदान करने में बड़ी सहायता मिली थी।

एक फ्रांसीसी रसायन-शास्त्री ने पता लगाया था कि यूरेनियम धातु से किरणें निकलती रहती हैं और यूरेनियम को महीनों अंधेरे में रखे रखें तो भी इन किरणों के प्रकाश में कोई अन्तर नहीं पड़ता। किन्तु यह सब विकिरण कैसे होता है, इसका स्वभाव और कारण क्या है, इस बारे में अभी तक कोई खोज नहीं हुई थी। मेरी को लगा कि यदि इस बात की खोज की जाए तो ठीक होगा। डाक्टरेट की उपाधि के लिए यह विषय उसे उपयुक्त लगा।

अब इस खोज के लिए उसे अलग जगह चाहिए थी। इस काम में भी पियरी ने उसकी सहायता की

और स्कूल भवन की नीचे की मंजिल में एक कमरा दिला दिया। यह कोई बहुत उपयुक्त स्थान नहीं था, कुछ खराब ही था पर जैसे-तैसे काम तो चलाना ही था। इसलिए मेरी ने इस कमरे में अपने उपकरण यथास्थान रखे और कार्य प्रारम्भ कर दिया।

यह स्थान न तो मेरी के स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त था और न यंत्रों के लिए। मौसम के परिवर्तन का दोनों पर बुरा प्रभाव पड़ता था।

अभी कार्य प्रारम्भ किए कुछ सप्ताह ही हुए थे कि शोध द्वारा कुछ रोचक परिणाम प्राप्त होने लगे। यूरेनियम की किरणों के सम्बन्ध में ज्यों-ज्यों उसकी जानकारी बढ़ती गई, वे पहले से अधिक आश्चर्यजनक लगने लगीं। इन किरणों का स्वभाव बड़ा विचित्र था। प्रकाश और ऊष्मा का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। इन किरणों पर कार्य करते समय मेरी के मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि क्या अन्य किसी धातु से भी इस प्रकार की किरणें निकलती हैं या नहीं।

उसने यूरेनियम की किरणों की शोध बन्द कर दी और दूसरी धातुओं को लेकर परीक्षण करने प्रारम्भ कर दिए। बड़ी जल्दी उसने यह पता लगा

लिया कि थोरियम धातु के योगिकों से भी किरणें निकलती हैं। ये परीक्षण उसने धातु को शुद्ध और अयस्क (अशुद्ध) दोनों रूपों में लेकर किए थे।

इस प्रकार के सर्वश्रेष्ठ परिणाम पिच ब्लैंड नामक कच्ची (अशुद्ध) धातु से प्राप्त हुए। मेरी को विश्वास हो गया कि पिचब्लैंड में यूरेनियम अथवा थोरियम की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली विघटनाभिकता है। विघट-नाभिकता से अभिप्राय उस क्रियाशीलता से है जो धातु से विकिरण के रूप में होती है। इसे अंग्रेजी में रेडियो एक्टिवटी कहते हैं। इस क्रियाशीलता का यह नाम मेरी ने ही रखा था।

अप्रैल १८९४ में मेरी ने एक निबन्ध लिखा। उसमें उसने बताया कि पिचब्लैंड नामक कच्ची धातु में एक नई धातु होती है जो अधिक विघटनाभिक होती है।

मेरी का पति पियरी इन प्रयोगों को बड़े मनोयोग से देखता रहा और सुझाव देकर उसकी सहायता करता रहा। मेरी का शोध-कार्य ज्यों-ज्यों प्रगति करता गया, उसका काम भी बढ़ता गया। अब उसे एक सहयोगी की आवश्यकता थी। पियरी ने यही उचित समझा कि वह अपनी खोज को कुछ समय के लिए

स्थगित कर दे और मेरी की सहायता करे। अब 'एक सो एक और दो सो ग्यारह' वाली बात हो गई। मेरी का उत्साह तो दुगुना हो ही गया, पियरी भी कम उत्साहित न था। दोनों पति-पत्नी एकजुट हो कर अथक परिश्रम से कार्य करने लगे। अब वे अपने शोध-कार्य का जो विवरण लिखते, उसमें 'मैंने' के स्थान पर 'हमने' का प्रयोग करते।

इसी वर्ष गर्मियों में उन्होंने घोषणा की कि वे एक नई धातु खोजने में सफल हुए हैं। इस नई धातु का नाम उन्होंने पोलिनियम रखा। प्रयोगों-परीक्षणों से उन्हें पता लग गया था कि पिचब्लैंड धातु में एक दूसरी धातु के मिले होने की पूरी सम्भावना है क्योंकि इतनी अधिक विघटनाभिकता पोलिनियम से प्राप्त नहीं होती। यह अनुमान ही रेडियम खोजने की दिशा में पहला और महत्त्वपूर्ण पग था।

इन दिनों जबकि मेरी अत्यन्त महत्वपूर्ण वैज्ञानिक शोध कार्य में व्यस्त थी, गृहस्थी का काम पहले ही की तरह उसे करना पड़ता था। वैसे ही जैसे कोई गृहस्थिन करती है। वह अब घर के खर्च का हिसाब रखती और डायरी में नन्ही बच्ची आइरीन के शारीरिक-मानसिक विकास की प्रगति का लेखा-जोखा भी

रखती ।

१७ अक्तूबर, १८९८ की मेरी क्यूरी ने डायरी में लिखा : आइरीन घुटनों के बल न चलकर अब भली प्रकार चल-फिर लेती है ।

एक जगह उसने लिखा : हम विश्वास करते हैं कि विघटनाभिक पदार्थों में एक नया तत्त्व है जिसका नाम हम रेडियम रखना उचित समझते हैं ।

फिर ६ जनवरी, १८९९ को उसने अपनी डायरी में लिखा : अब आइरीन के पन्द्रह दांत निकल आए हैं ।

आइरीन, जिसका पन्द्रहवां दांत अपनी मां के लिए उतना ही महत्वपूर्ण था, जितना कि एक नया आविष्कार । आगे चलकर आइरीन भी अपनी मां के समान ही एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक बनने वाली थी । मां की तरह उसे भी नोबुल पुरस्कार प्राप्त करना था ।

२७ दिसम्बर, १८९८ को इन दोनों सहयोगियों ने विज्ञान-एकादमी के सम्मुख यह घोषणा की :

"हमने एक नए तत्त्व की खोज कर ली है और उसका नाम 'रेडियम' रखा है ।"

रेडियम की खोज के सम्बन्ध में घोषणा होने से उस समय के भौतिक वैज्ञानिकों में हल-चल-सी मच गई ।

किन्तु क्यूरी दम्पति ने जिस अनदेखे नए तत्त्व के अस्तित्त्व की घोषणा की थी वे उसे देखना, छूना और तोलना चाहता थे।

उनका उद्देश्य स्पष्ट था। वे शुद्ध रूप में पोलिनियम और रेडियम धातुओं को प्राप्त करना चाहते थे। अभी तक कच्चे पिचब्लैंड में उन्हें इन दोनों के अस्तित्व के लक्षण मात्र दिखाई दिए थे। पिचब्लैंड में इनकी मात्रा बहुत ही कम होती है। इस लिए ढेरों पिचब्लैंड की आवश्यकता थी। इतना रुपया कहां से आए जो ढेरों पिचब्लैंड खरीदा जा सके। अभी तक स्पष्ट रूप से उन्हें यह पता नहीं था कि पिचब्लैड अयस्क में ये विघटनाभिक तत्त्व केवल दस लाखवें भाग के रूप में ही मिलते हैं। इसका अर्थ यह था कि एक ग्राम रेडियम प्राप्त करने के लिए दस लाख ग्राम पिचब्लैंड चाहिए था।

पिचब्लैंड भारी मात्रा में खरीदने की उनकी सामर्थ्य नहीं थी। पर जहां चाह होती है, वहां राह निकल ही आती है। उन्होंने पता लगाया कि बोहेमिया की कुछ खानों में पिचब्लैंड से लवण निकाले जाते हैं। जिन्हें कांच बनाने के काम में लाया जाता है। लवण निकाल लिए जाने के बाद भी उसमें पोलिनियम और

रेडियम अल्प मात्रा में रह जाता है। इस लवण निकले पिचब्लैंड अयस्क का मूल्य कम रह जाता है। वह सस्ते दामों में मिल सकता है, इस सम्भावना से पियरी ने बोहेमिया को एक पत्र लिखा कि वह किस भाव मिल सकता है। पियरी दम्पति ने निश्चय किया कि हमें तब तक प्रतीक्षा में नहीं बैठे रहना चाहिए जब तक कहीं से बड़ी रकम की व्यवस्था न हो जाए अपितु अपनी बचत की राशि में से जितने पिचब्लैंड का मूल्य और भाड़ा चुकाया जा सके, इस समय उतना ही खरीद कर काम प्रारम्भ कर देना चाहिए।

अब एक और नई समस्या उनके सामने आ खड़ी हुई। इस पिचब्लैंड को रखने और पोलिनियम और रेडियम को अलग करने के लिए खुले स्थान की समस्या थी। स्कूल आफ फिज़िक्स में उन्हें एक सायबान मिल गया। वर्षा में उसकी छत टपकती रहती। नीचे कच्चे फर्श में कीचड़ हो जाती। यह जगह इतनी खराब थी कि कोई मजदूर भी वहां काम करना पसन्द न करता। पर लगन के धनी इन वैज्ञानिकों को तो जैसे-तैसे अपना काम चलाना था। उन्होंने उस को ठीक-ठाक करना प्रारम्भ कर दिया। इन्हीं दिनों बोहेमिया से पत्र का उत्तर आ गया जो बड़ा उत्साह-

वर्द्धक था। वहां के कारखाने वालों ने लिखा था कि किराए-भाड़े का खर्च देकर आप एक टन पिचब्लैंड अयस्क मुफ्त में प्राप्त कर सकते हैं। उन्होंने यह भी लिखा था कि यदि भविष्य में और अधिक माल की आवश्यकता हुई तो हम उसे सस्ते दामों में दे देंगे।

एक दिन बोहेमिया से पिचब्लैंड के बोरे आ पहुंचे। बोरे उतार कर सायबान के भीतर रख लिए गए। आज मेरी बड़ी प्रसन्न थी। इसी भूरे रंग के पिचब्लैंड में उसे आशा की किरण और अपना उज्ज्वल भविष्य दिखाई दे रहा था। उसकी तत्त्वान्वेषणी बुद्धि और पारदर्शिनी दृष्टि ने कूड़े के ढेर में से रत्न की प्राप्ति का मार्ग खोज लिया था। सच ही कहा है : 'रत्न अपने पारखी को नहीं खोजता, रत्न-पारखी ही रत्न की खोज करते हैं।'

पिचब्लैंड को उबालने के लिए बड़े-बड़े कड़ाहे खरीदे गए। कड़ाहों में उबलते पिचब्लैंड को मेरी एक लकड़ी के लम्बे-से डंडे से चलाती रहती।

ऊपर से महत्वहीन-से दिखने वाले इस काम को करते-करते दिन सप्ताहों में, सप्ताह महीनों में और महीने वर्षों में बदलते गए। काम अपनी अबाध गति से होता रहा।

कितना उबा देने वाला था यह काम, पर इस वैज्ञानिक दम्पति ने इसे ऐसी तन्मयता और मनोयोग से किया कि यह लम्बा समय उन्हें स्वप्न जैसा लगा। उनके सामने एक स्वप्न था और उस स्वप्न को साकार कर दिखाने का एक दृढ़ संकल्प। दुःख-सुख उन्हें छू भी नहीं पाते। किसी ने कहा है : मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दुःखं न च सुखम्। इसका अर्थ है कि कार्यार्थी मनुष्य दुःख-सुख की परवाह नहीं करते हैं। बस, ऐसे ही धुन के पक्के थे पियरी और मेरी।

काम के बीच जब कभी वे चाय पीने बैठते तो भी रेडियम हो उनकी चर्चा का विषय होता। मेरी कहतीं, "यह देखने में कैसा होगा ?"

पियरी कहते, "कह नहीं सकता कि कैसा हो। मैं तो यही चाहता हूं कि इसका रंग सुन्दर हो।"

जैसे मां होने वाले बच्चे के बारे में तरह-तरह की मधुर कल्पनाएं करती रहती है वैसी ही यह कल्पना भी थी।

बढ़ते काम के लिए उन्हें एक और सहायक की आवश्यकता थी। इसके लिए उन्होंने एक सुन्दर, नवयुवक फ्रांसीसी वैज्ञानिक आन्द्रे दबर्ने को सहायक बना लिया। यह उनका सहायक तो था ही, मित्र भी

बन गया।

इस पिचब्लैंड को उबालते और छानते मेरी को चार वर्ष होने को आए। अब कार्य समाप्त होने का समय निकट था। अब उन्हें फिर एक ऐसे कमरे की आवश्यकता थी जो साफ-सुथरा हो और सर्दी-गर्मी और धूल से उपकरण अप्रभावित और सुरक्षित रह सकें। सायबान के नीचे की यह जगह इस दृष्टि से एकदम बेकार थी। यहां लोहे और कोयले का चूरा और धूल उड़ती रहती और शुद्ध करके रखे पदार्थों में मिल जाती। इससे मेरी की परेशानी और काम बढ़ जाता और वह खिन्न हो उठती।

सन् १९०२ में वे शुद्ध रेडियम की अत्यल्प मात्रा तैयार करने में सफल हो गए। अब उसे देखा, छुआ और तोला जा सकता था। जिन वैज्ञानिकों ने अब तक उसके अस्तित्व को स्वीकार करने से इन्कार किया था, अब वे भी चुप हो गए। प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता! पियरी की मां का देहांत कुछ वर्ष पूर्व हो चुका था। उनके बूढ़े पिता अब उनके साथ ही रहते थे। रात के नौ बज चुके थे। मेरी आइरीन को थपकियां देकर सुलाने का प्रयत्न कर रही थी। बच्ची को सुलाने के बाद वह उसके लिए एप्रिन सी

रही थी और पियरी कमरे में धीरे-धीरे घूम रहे थे। मेरी का मन सिलाई में नहीं लग रहा था।

वह एकाएक उठी और पियरी से बोली, "चलो, एक चक्कर प्रयोगशाला में लगा आएं।"

दोनों कोट पहन कर चुपचाप चल पड़े। पियरी ने ताला खोला और दोनों कमरे में प्रविष्ट हुए।

पियरी लैम्प जलाने की सोच ही रहे थे कि मेरी ने रोक दिया। वह अंधेरे कमरे में अपनी मुस्कराहट बिखेरते हुए बोली, "तुम्हें याद है, एक दिन तुमने कहा था कि रेडियम का रंग सुन्दर हो, कहा था न ?"

रेडियम में रंग से कुछ अधिक भी था। वह मन्द-मन्द चमक रहा था।

अन्धेर घुप्प कमरे में वे चुपचाप बैठे रहे। उनकी दृष्टि रेडियम पर जमी हुई थी और अपलक आंखों से वे उसे निहार रहे थे। जैसे किसी अद्भुत-आश्चर्यजनक वस्तु को देखकर आदमी चित्र लिखित-सा देखता रह जाता है।

पियरी ने कभी कहा था, 'मनुष्य को अपने जीवन को एक स्वप्न बना लेना चाहिए और फिर उस स्वप्न को सत्य में परिवर्तित कर देना चाहिए।'

पियरी ने जो जीवन-सूत्र बनाया था उसे दोनों

ने मिलकर चरितार्थ कर दिया था।

प्रकाश-धर्मा रेडियम के प्रकाश से साक्षात्कार के इस क्षण को मेरी कभी नहीं भूल सकी, कभी नहीं।

## संघर्षमय जीवन

स्कूल आफ फिज़िक्स से पियरी को जो पांच-सौ फ्रैंक मासिक वेतन मिलता था, उससे घर का साधारण खर्च चलाने में भी कठिनाई हो रही थी। कारण यह था कि परिवार में अब पांच प्राणी हो गए थे।

पियरी, मेरी तथा बच्ची आइरीन, पियरी के पिता तथा एक नौकर। प्रयोगशाला में भी कुछ खर्च होता ही था।

पियरी को वर्ष में १२० पाठ पढ़ाने के अतिरिक्त प्रयोगशाला में छात्रों का निदेशन भी करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त अपने शोध-कार्य के लिए भी समय देना पड़ता था।

बीच में एक बार ऐसा अवसर भी आया जब सारबोन विश्वविद्यालय में पियरी के भौतिक रसायन शास्त्र के प्रोफेसर बन जाने की संभावना थी। इस पद पर उनकी नियुक्ति हो जाती तो एक साथ कई

लाभ हो सकते थे। अधिक वेतन मिलता और निजी प्रयोगों के लिए प्रयोगशाला भी मिल जाती, पर यह नहीं हुआ। उनसे कम योग्यता वाले व्यक्ति की नियुक्ति इस पद पर हो गई। इससे भी उनका मन खिन्न हुआ। यह सन् १८९४ की बात है।

घर के बढ़े हुए खर्च को पूरा करने के लिए पियरी ने स्कूल में अधिक पाठ पढ़ाने प्रारम्भ किए। इससे यद्यपि उन्हें दो सौ फ्रैंक प्रति मास अतिरिक्त आय हो जाती थी पर आराम के लिए थोड़ा भी समय नहीं मिल पाता था।

क्यूरी-दम्पति की प्रसिद्धि दूर देशों तक फैल गई थी पर समृद्धि अभी बहुत दूर थी। जेनीवा विश्व-विद्यालय पति-पत्नी दोनों को अपने यहां अच्छा वेतन और पद देने को तैयार था। पर वहां चले जाने का अर्थ था कि रेडियम सम्बन्धी शेष शोध-कार्य को छोड़ देना। वे तंगी में रहकर भी इस शोध-कार्य को अधूरा छोड़ना नहीं चाहते थे, इसलिए धन और पद के प्रलोभन को उन्होंने ठुकरा दिया।

इन्हीं दिनों पियरी को अध्यापन कार्य की एक अच्छी नौकरी मिल गई। मेरी को भी सेवरेस के गर्ल्स ट्रेनिंग कालेज में प्रोफेसर का पद मिल गया।

अब मेरी के पास घर के काम-काज और शोध-कार्य के लिए और भी कम समय रह गया। पति-पत्नी दोनों को अच्छी नौकरी मिल जाने से घर-खर्च की तंगी तो दूर हो गई पर अब भी सुख-सुविधा पूर्ण जीवन बिताने में वे असमर्थ थे।

मेरी अपने इस नए कार्य में भी खूब रुचि लेती और बड़े उत्साह से नवीन और मौलिक विधियों का प्रयोग करती पर सेवरेस जहां उसे पढ़ाने जाना पड़ता, दूर था और जाने-आने में उसका बहुत समय खर्च हो जाता था।

वे दोनों अब भी अपने लिए कोई प्रयोगशाला बनाने में असमर्थ थे। और उसी सायबान के नीचे की प्रयोगशाला में कार्य करते थे।

शोध-कार्य के लिए कम समय बच रहने के कारण वे अपने सोने के समय में कटौती करके शोध-कार्य करते। कई बार तो उन्हें भोजन करने के लिए भी समय नहीं मिलता और वे भूखे ही रह जाते।

स्वास्थ्य नियमों का इस उपेक्षा से जो परिणाम होना था, वही हुआ। उन दोनों का स्वास्थ्य दिनों-दिन गिरता गया। पियरी तो कई बार बिस्तर पकड़ चुके थे। उन्हें रात को नींद नहीं आती। मेरी भी

दुबली हो गई थी। वह बीमार-सी दिखाई देती। पति की देख-भाल भी अब वह पहले की अपेक्षा अधिक करने लगी। ऊपर से पति के स्वास्थ्य की चिन्ता उसे घेरे रहती। उनके मित्रों ने सलाह दी कि कुछ आराम कीजिए और कहीं बाहर चले जाइए। परन्तु उन्होंने उनकी एक न मानी। गर्मियों की छुट्टियों में जिसे वे आराम करना कहते थे, वह भी वास्तव में आराम नहीं था। साइकल पर दूर तक यात्रा करना, पैदल चलना या पहाड़ों पर चढ़ना—इसे आराम तो नहीं कहा जा सकता। पर उन्हें इसी से सन्तोष था।

१९०२ में वारसा (पोलैंड) से मेरी के पिता की बीमारी का समाचार मिला। मेरी उनसे मिलने के लिए व्यग्र हो उठी। वह जानती थी कि वे अब अधिक दिन नहीं जिएंगे। परन्तु जब तक वह वारसा पहुंची वह चल बसे थे। उसे इस बात का बड़ा दुःख था कि अपने स्नेहशील पिता के अन्तिम दर्शन वह नहीं कर सकी।

इसके एक वर्ष बाद एक दूसरा दुःखद समाचार उसे मिला। उसकी प्यारी बड़ी बहन ब्रोन्या का पुत्र अचानक चल बसा।

स्वजनों के बिछोह के ये आघात उसके लिए

गहरी पीड़ा छोड़ गए ;

इस सबके बावजूद उन्हें अपने-अपने काम पर जाना पड़ता और स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकर सायबान के नीचे प्रयोगशाला में कार्य करना पड़ता ।

१८९९ और १९०४ के बीच क्यूरी दम्पति ने जो साधना की थी, उसके फलस्वरूप उन्होंने विघटना-भिकता के सम्बन्ध में ग्यारह विवरण पत्र प्रकाशित किए थे जो उनकी विलक्षण प्रतिभा और विज्ञान-निष्ठा के परिचायक थे ।

रेडियम की खोज और उससे उत्पन्न विज्ञान के नए क्षितिजों की चर्चा चोटी के वैज्ञानिकों का प्रिय विषय था । इस संबंध में वैज्ञानिकों की ओर से निरंतर पूछ-ताछ के पत्र आने लगे । क्यूरी दम्पति को रेडियम के 'माता-पिता' कहा जाने लगा । यह ठीक ही था । वे पत्रों का उत्तर देते और उचित सलाह भी । उनके प्रयोग जारी थे और नए-नए तथ्य सामने आ रहे थे ।

दो जर्मन वैज्ञानिकों ने, शरीर पर पड़ने वाले रेडियम के प्रभावों का विवरण प्रस्तुत किया । पियरी ने अपनी नंगी बांह पर रेडियम रखकर अपने शरीर को ही उसकी प्रयोगशाला बना डाला । रेडियम ने काफी गहराई तक बांह को जला डाला । पियरी महोदय ने

रेडियम के जलने से हुए इस घाव का अध्ययन किया और रेडियम के त्वचा पर पड़ने वाले प्रभाव का विवरण प्रस्तुत किया। इस घाव को भरने में दो मास लग गए।

इसके बाद पियरी ने दो प्रसिद्ध चिकित्सकों के साथ जानवरों पर रेडियम के प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन से वे इस परिणाम पर पहुंचे कि शरीर में होने वाली विशेष प्रकार की अस्वस्थ वृद्धियों का रेडियम द्वारा उपचार हो सकता है। अब तो चिकित्सक रोगों के उपचार के लिए रेडियम का उपयोग करने लगे। यह भी पता लगा कि कैंसर जैसे असाध्य रोग में यदि कोई वस्तु प्रभावकारी हो सकती है तो वह रेडियम ही है। अब तो सभी देश अपने-अपने यहां रेडियम का उत्पादन करने लगे। इसके लिए सब जगह वही विधि अपनाई गई, जो क्यूरी दम्पति ने अपनाई थी। जब इस विधि को उपयोग में लाने की अनुमति मांगी गई तो उन्होंने कहा: यह हमारी व्यक्तिगत सम्पत्ति तो है नहीं; सार्वजनिक कल्याण की कामना से ही हमने रेडियम की खोज की थी। शुद्ध रेडियम प्राप्त करने की विधि हम समाचार पत्रों में प्रकाशित करवा देंगे जिससे सब लोग जान सकें

और लाभान्वित हो सकें। उन्हें इस खोज से रुपया कमाना होता तो वे संसार के सर्वाधिक धनी होते।

मेरी को शोध-प्रबन्ध पर काम करते पांच वर्ष होने लगे थे। अभी तक उसने अपने शोध को अन्तिम रूप नहीं दिया था। उसे सामग्री जुटाने के लिए पर्याप्त समय ही नहीं मिलता था। अन्त में २५ जून, १९०३ को वह सारबोन विश्वविद्यालय के एक कक्ष में अपने शोध-प्रबन्ध के निर्णायकों के समक्ष प्रस्तुत हुई।

निर्णायक ने अपना निर्णय सुनाया : "पेरिस विश्व-विद्यालय ससम्मान आपको 'डाक्टर आफ फिजिकल साइंस' की उपाधि प्रदान करता है।"

तालियों से वह कक्ष गूंज उठा।

वृद्ध डा० क्यूरी, पियरी क्यूरी और ब्रोन्या के चेहरे प्रसन्नता से चमक रहे थे।

दृढ़ संकल्प ने परिस्थितियों पर विजय पाई थी।

## सम्मान और नोबुल पुरस्कार

विश्व की ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक संस्था रॉयल सोसायटी, लन्दन ने डा० पियरी क्यूरी को भाषण देने के लिए निमंत्रित किया। जुलाई १९०३ में क्यूरी

दम्पति लन्दन गए। रायल सोसायटी के सदस्य और उस समय के ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक श्री लार्ड कैल्विन ने उनका स्वागत किया। मेरी क्यूरी विश्व की सर्व-प्रथम महिला थीं, जिन्हें रायल सोसायटी की बैठक में भाग लेने की अनुमति दी गई थी। डा० पियरी क्यूरी ने फ्रेंच में व्याख्यान दिया और रेडियम के गुण-धर्म पर प्रकाश डाला।

इसी वर्ष रायल सोसायटी ने पियरी को डेवी पदक प्रदान कर सम्मानित किया। यह पदक विज्ञान के क्षेत्र में उच्चतम सम्मान का प्रतीक था।

दूसरा सम्मान स्वीडन देश ने किया। स्वीडन का विश्वविख्यात नोबुल पुरस्कार एक ही खोज के लिए तीन व्यक्तियों को दिया गया। हेनरी बेकरेल, पियरी क्यूरी तथा मेरी क्यूरी। यह पुरस्कार रेडियम तथा पोलोनियम नामक रेडियम-धर्मी तत्त्वों की खोज के लिए दिया गया था। स्वर्ण पदकों के अतिरिक्त लगभग डेढ़ लाख रुपए की राशि इस सम्मान में प्राप्त हुई थी जो आधी बेकरेल को और आधी क्यूरी दम्पति को मिली।

रेडियम का उपयोग मुख्य रूप से कैंसर चिकित्सा में हुआ है। धातु ढालने के उद्योग में भी रेडियम का उपयोग हुआ है। अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा में रेडियम

मिश्रित जिंक सल्फाइड को चमकीले लेप बनाने के काम में लाते हैं। इसे घड़ी के डायल में लगाया जाता है। रेडियम का उपयोग करते समय सावधानी बरतना आवश्यक होता है, क्योंकि इससे उत्पन्न रेडियो ऐक्टिवता तथा अन्य कण अत्यन्त हानिकारक होते हैं। सूक्ष्म मात्रा में इसका धातु में मिश्रण करने से उसके आन्तरिक ढांचे का चित्र दिखाई देता है। इस विधि द्वारा चित्र लेने को रेडियोग्राफी कहते हैं।

स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में १० दिसम्बर को पुरस्कार प्रदान समारोह सम्पन्न हुआ किन्तु अस्वस्थ होने के कारण क्यूरी दम्पति वहां नहीं जा सके।

मेरी यह सम्मान प्राप्त करने वाली प्रथम महिला वैज्ञानिक थी। उसकी ख्याति संसार भर में फैल चुकी थी। प्रतिदिन आने वाले पत्रों और वैज्ञानिक संस्थाओं से व्याख्यान देने के लिए मिलने वाले निमन्त्रण पत्रों का तांता लग गया। समाचार पत्रों के संवाददाता और फोटोग्राफर उनके पास चक्कर लगाने लगे। क्यूरी-परिवार इस भीड़-भाड़ से परेशान हो चला।

१९०४ के जनवरी मास में उन्हें पुरस्कार की राशि मिल गई।

पियरी क्यूरी ने बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण स्कूल

आफ फिज़िक्स में पढ़ाने का काम छोड़ दिया और अपनी प्रयोगशाला के लिए उन्होंने एक सहायक रख लिया।

मेरी अब भी गर्ल्स ट्रेनिंग कालेज में नौकरी कर रही थी।

प्रसिद्धि के कारण उनका व्यक्तिगत सुख-चैन तो छिन ही गया, प्रयोगशाला के काम में भी रुकावट पड़ने लगी।

मेरी इस भीड़-भाड़ से जब तंग आ गई और उसने देख लिया कि यदि इन लोगों से पीछा नहीं छूटा तो सारा काम ठप्प हो जाएगा तो उसने आने वालों से मिलना बन्द कर दिया। फिर भी कभी न कभी कोई आ ही धमकता और काम में रुकावट पड़ती। ख्याति उनकी शत्रु बन गई और उनका जीवन और कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गया।

मेरी के ख्याति से ऊबने के कारण थे। उसे पत्नी, मां, वैज्ञानिक और अध्यापिका के चतुर्मुखी कर्त्तव्यों का निर्वाह करना पड़ता था। उसे इन कामों से क्षण-भर को भी अवकाश नहीं मिलता था। उसके पास व्यर्थ गंवाने के लिए समय था ही नहीं।

क्यूरी दम्पति ने कुछ दिन किसी ऐसे एकान्त

स्थान में छुट्टियां मनाने का निश्चय किया जहां उन्हें जानने-पहचानने वाला कोई न हो। देखने में वे दोनों साधारण लगते ही थे।

इन्हीं दिनों मेरी फिर गर्भवती हुईं। उनकी तबियत ठीक नहीं रहती थी। कमज़ोर भी बहुत हो गई थीं। पियरी को उनकी चिन्ता थी, तो उन्हें पियरी के स्वास्थ्य की। मेरी को ऐसा लगता कि शरीर और मन में कहीं भी शक्ति और उत्साह बाकी नहीं रहा है। इन दिनों वे विज्ञान से भी ऊब गईं।

दिसम्बर १९०४ को मेरी ने दूसरी बेटी को जन्म दिया। उसका नाम रखा ईव। प्रसव के बाद मेरी के लिए आराम आवश्यक हो गया और इस आराम का उनके स्वास्थ्य पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। नवजात बच्ची के प्रेम ने उसे फिर उत्साह और उमंग से भर दिया। विज्ञान में फिर उसकी रुचि जाग्रत हुई। वह प्रयोगशाला जाने लगीं। उचित विश्राम के बाद वे ट्रेनिंग कालेज की नौकरी पर भी जाने लगीं।

इस पुरस्कृत दम्पति को स्वीडन की राजधानी स्टाक होम से व्याख्यान के लिए बार-बार बुलावा आ रहा था पर बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण वे उस यात्रा को टालते जा रहे थे।

जून, १६०५ को पियरी ने स्टाक होम में रेडियम पर एक व्याख्यान दिया। व्याख्यान का अन्त उन्होंने इस तरह किया : "मैं उन्हीं में से एक हूं जो श्रीमान नोबुल (नोबुल पुरस्कार के संस्थापक) की भांति यह सोचते हैं कि नई खोजों से अनिष्ट की अपेक्षा लाभ अधिक होगा।"

अनेक वैज्ञानिकों से परिचित होकर और विज्ञान के सम्बन्ध में चर्चा करके वे खुशी-खुशी पेरिस लौटे।

इतनी कार्य-व्यस्त रहने पर भी मेरी बच्चियों को नौकरानी के जिम्मे छोड़कर ही निश्चिन्त नहीं हो जातीं। वह स्वयं भी उनकी देखभाल करतीं।

१६०५ में पियरी की नियुक्ति सारबोन विश्व-विद्यालय में प्रोफेसर के पद पर हो गई। उन्हें सहयोगी कार्य-कर्त्ता रखने की स्वीकृति मिल गई। स्कूल आफ फिज़िक्स में रहने के दो कमरों के अतिरिक्त उसके पास ही दो कमरे और बनवा देने की बात तय हो गई। श्रीमती मेरी क्यूरी की नियुक्ति भी दो हज़ार फ्रेंक वार्षिक पर विज्ञान प्रयोगशाला में निदेशक के पद पर हो गई। अब पति-पत्नी दोनों एक ही प्रयोग-शाला में अपना काम विधिवत् करने लगे। अब उनका जीवन बड़े मजे में कट रहा था। दोनों एक-दूसरे को

प्यार करते थे और घर तथा बाहर एक दूसरे के सहयोगी और सलाहकार थे। ईव अब गिरते-पड़ते चलने लगी थी। उसकी किलकारियों और बाल-सुलभ क्रीड़ाओं से घर में आनन्द का वातावरण बना रहता था।

## जोड़ी बिछुड़ गई

१९ एप्रिल, १९०६ को बड़ी वर्षा हो रही थी। आकाश बादलों से घिरा हुआ था। डा० पियरी क्यूरी आज दोपहर का भोजन अपने विभाग के प्रोफेसरों के साथ करने वाले थे। मेरी भी आज प्रातः कुछ अधिक व्यस्त थीं। जाते-जाते श्री पियरी ने मेरी को पुकार कर पूछा कि क्या तुम प्रयोगशाला चल रही हो? वे बच्चियों को कपड़े पहना रही थीं। मेरी का उत्तर पियरी को ठीक से सुनाई नहीं दिया और वे किवाड़ बन्द करके चल दिए।

लगभग ढाई बजे श्री पियरी विज्ञान विभाग से उठे। बाहर वर्षा हो रही थी। वे इसकी परवाह किए बिना सेन नदी की ओर चल पड़े, वर्षा के कारण सड़क पर खूब भाग-दौड़ मची हुई थी। ट्रामों, गाड़ियों और ठेलों का तांता लगा हुआ था। पटरियों पर पैदल चलने

वालों की भीड़ थी और सभी अपने गन्तव्य पर जल्दी पहुंच जाना चाहते थे ताकि वर्षा से त्राण मिले। डा० पियरी इसी भीड़-भाड़ वाली सड़क पर पैदल चल रहे थे। वे अपने ही विचारों में खोए-से, बाहरी भीड़-भाड़ से बेखबर चले जा रहे थे। वे कभी पटरी पर चलने लगते और कभी भीड़ के कारण सड़क पर।

श्री पियरी सड़क पार करना चाहते थे। एक सवारी के पीछे चलते हुए, उन्होंने सड़क पार करने का प्रयास किया। किन्तु इसी बीच एक बड़ी घोड़ा-गाड़ी के दोनों घोड़े बिदक उठे और डा० पियरी से टकरा गए। घोड़ा पिछली टांगों पर खड़ा हो गया। सड़क पर फिसलन के कारण डा० पियरी का पांव फिसल गया और वे गिर पड़े। लोगों ने बचाने के लिए शोर मचाया। कोचवान ने घोड़े को संभालने का भरसक प्रयत्न किया पर वे नहीं संभले।

डा० पियरी यद्यपि गिर पड़े थे तो भी उन्हें कोई चोट नहीं लगी थी। वे बिना हिले-डुले पड़े रहे। गाड़ी के अगले पहिए उन्हें बिना छुए आगे बढ़ गए। किन्तु गाड़ी रुक नहीं सकी और पिछला एक पहिया पियरी के माथे के ऊपर से गुज़र गया। रेडियम के जन्मदाताओं में से एक डा० पियरी क्यूरी की जीवन लीला समाप्त

हो गई।

पुलिस घटना-स्थल पर पहुंच गई और मृतक के शरीर को थाने में ले गई। डा० पियरी क्यूरी की जेब से निकली डायरी से पता लगा कि ये तो विश्वविख्यात डा० पियरी क्यूरी हैं। यह दुःखद समाचार तुरन्त ही सर्वत्र फैल गया। मेरी को यह शोकपूर्ण समाचार पहुंचाने के लिए जब दो सहयोगी घर आए तो वे घर पर नहीं थीं। श्री पियरी के बूढ़े पिता घर पर थे। उन्हें इन दोनों व्यक्तियों के घबराए हुए चेहरों को देखकर आश्चर्य हुआ। वे लोग इस दुःखद समाचार को सुनाने में हिचकिचा रहे थे। जब उन्होंने दुर्घटना की बात बताई तो वृद्ध क्यूरी रो पड़े।

मेरी छह बजे घर पहुँचीं। यह समाचार सुनकर वह स्तब्ध रह गईं। वह स्थिर खड़ी रहीं। न रोईं, न चिल्लाईं। जैसे कुछ समझ न पा रही हों, जैसे उन्हें इस समाचार के सत्य होने का विश्वास न हो।

मेरी का जीवन-साथी, उसे अकेली, असहाय छोड़कर वहां चला गया था, जहां से कोई लौटकर नहीं आता है।

पियरी को साक्स में दफनाया गया। उनके मित्र, सहयोगी और सम्बन्धी फूट-फूट कर रो पड़े।

मेरी के बहन-बहनोई भी आ पहुंचे। बूढ़े डा० क्यूरी और देवर जेक्स मेरी को भाव-शून्य देखकर घबरा उठे। वह अब तक ऊपर से शान्त-स्थिर बनी हुई थीं। गुम चोट की तरह ऊपर तो कुछ दिखाई नहीं देता था किन्तु उनका हृदय टूक-टूक हो चुका था।

पियरी की आकस्मिक और असामयिक मृत्यु से कई प्रश्न पैदा हो गए। उनके द्वारा अधूरे रह गए शोध-कार्य को कौन पूरा करेगा ? उनके दुःसह वियोग के कारण मेरी का जीवन खण्डहर बन गया था। क्या वह अपने को संभाल पाएंगी ? उनका दाम्पत्य जीवन तो लुट ही चुका था। क्या वह अपने वैज्ञानिक जीवन को बचा पाएंगी ? छोटी-छोटी दो बच्चियों का क्या होगा ? सारबोन में पियरी के रिक्त स्थान की पूर्ति कैसे होगी ?

कुछ प्रमुख वैज्ञानिकों के प्रयत्न से पियरी के रिक्त स्थान पर मेरी को नियुक्त कर दिया गया।

विज्ञान के लिए समर्पित पति के कार्य को आगे बढ़ाने का उन्होंने जी-जान से प्रयत्न किया। गर्मियों की छुट्टियों में उन्होंने आइरीन को अपनी बहन हेला के साथ और ईव को उसके दादा के साथ बाहर भेज दिया। वह स्वयं पेरिस में रहीं। इसके दो कारण थे।

वर्षों से वे पति-पत्नी छुट्टियों में साथ-साथ बाहर जाते थे। अब की बार वह अकेली रह गई थीं। इसके अतिरिक्त इस वर्ष का पाठ्य-क्रम तैयार करना था। प्रयोगशाला के कार्य को भी चालू रखना था। वह अपने काम में जुट गईं। पियरी के विछोह से उत्पन्न दुःख को सहने का यही सबसे अच्छा उपाय था कि वह अपने को काम में व्यस्त रखें। पियरी के लिए उनकी यही सच्ची श्रद्धांजलि थी।

अब वह घर, जहां उन्होंने पियरी के साथ सुख के दिन बिताए थे, उसे काटने दौड़ता था। मेरी इस घर को छोड़ने का निश्चय कर चुकी थीं। उन्होंने इस बारे में वृद्ध श्वसुर डा० क्यूरी को बताया।

डा० क्यूरी ने कहा, "मेरा बेटा नहीं रहा। अब मैं तुम्हारे लिए बोझ नहीं बनना चाहता। मैं अकेला रह लूंगा या फिर जेम्स के साथ।"

मेरी नहीं चाहती थीं कि बूढ़े श्वसुर इस घर से जाएं। डा० क्यूरी ने उनका अनुरोध मान लिया।

## विज्ञान के लिए समर्पित जीवन

मेरी का उत्तरदायित्व पहले से भी बढ़ गया।

पिता की मृत्यु हो जाने पर सन्तान का भार तो सभी माताओं को उठाना पड़ता है पर मेरी को दो पुत्रियों के अतिरिक्त एक और का भार भी उठाना पड़ा। क्यूरी दम्पति को रेडियम का जन्मदाता कहा जाता था। विज्ञान के उद्यान का यह नया पौधा उन्हीं ने रोपा था और इसको पालने का उत्तरदायित्व भी उन्हीं पर आ पड़ा था। घर-गृहस्थी में दो छोटी बेटियों के साथ बूढ़े श्वसुर की देख-भाल, विश्वविद्यालय में विज्ञान के प्रोफेसर का उत्तरदायित्व, प्रयोगशाला के प्रमुख का पद, शोध-कार्य को जारी रखते हुए पति के और अपने अधूरे काम को पूरा करना—इतने सारे उत्तरदायित्व उनके ऊपर एक साथ आ पड़े थे।

उन्होंने साक्स में एक मकान किराए पर लिया और गृहस्थी को व्यवस्थित किया। बूढ़े डा० क्यूरी मेरी की अनुपस्थिति में बच्चियों को बहलाते और पढ़ाते। वे अपनी ओर से मेरी के लिए भरसक सहायक सिद्ध होना चाहते थे। कुछ ही वर्षों बाद १९१० में वृद्ध डा० क्यूरी का भी देहान्त हो गया। मेरी का यह सहारा भी छिन गया।

सारबोन में विज्ञान-विभाग को मेरी ने चमका दिया। वहां छात्रों की संख्या बढ़ गई, और इसके साथ

ही मेरी का काम भी। उन्हें प्रयोगशाला में भी छात्रों का निदेशन करना पड़ता। इस पर उन्होंने विघटनाभिकता (रेडियो ऐक्टिवटी) पर अपने शोध-कार्य को आगे बढ़ाया और इसके सम्बन्ध में लेख और पुस्तकें लिखना जारी रखा। इस विषय पर मेरी की लिखी हुई पुस्तक इस विषय की सर्वप्रथम पाठ्य-पुस्तक थी।

१९११ में मेरी को दोबारा नोबुल पुरस्कार मिला। यह पुरस्कार रसायन-विज्ञान के क्षेत्र में मौलिक खोज करने के लिए मिला था। मेरी न केवल नोबुल पुरस्कार प्राप्त करने वाली 'प्रथम महिला' थीं अपितु दोबारा नोबुल पुरस्कार प्राप्त करने वाली प्रथम वैज्ञानिक भी थीं। इससे पूर्व किसी भी पुरुष या स्त्री को दोबारा नोबुल पुरस्कार नहीं मिला था।

इसी वर्ष उनकी जन्म-भूमि वारसा में, विघटनाभिकता की एक नई प्रयोगशाला की निदेशिका बनने को मेरी ने अस्वीकार कर दिया। हां, उन्होंने दूर रह कर भी इस प्रयोगशाला के संचालन में ससयोग देने का आश्वासन दिया। वहां उसने अपने दो वरिष्ठ सहायकों को नियुक्त करवा दिया। प्रयोगशाला के उद्घाटन के अवसर पर वह वहां गईं तो उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ। उनके सम्मान में भोज भी दिया

गया ।

१९१४ में प्रथम विश्व-युद्ध प्रारंभ हुआ । मेरी ने तुरंत सेना चिकित्सा सेवा में घायलों के इलाज की योजना का कार्य प्रारंभ कर दिया । पेरिस के प्रमुख अस्पतालों में एक्स-रे की मशीने लगवाईं । ऐसी गाड़ियां भी तैयार करवाईं जिनमें एक्स-रे मशीनें लगी हुई थीं ताकि घायलों का मोर्चों के पास तुरंत एक्स-रे करके, आपरेशन किया जा सके । अब तक आइरीन सत्रह वर्ष की हो चुकी थी और अपनी मां के कार्यों में सहायता करने लगी थी ।

युद्ध समाप्ति पर मेरी ने दोहरी प्रसन्नता मनाई । उनकी जन्म भूमि पोलैंड रूस की दासता से मुक्त हो गई और फ्रांस भी विजयी रहा । जर्मनी की हार हुई । मेरी को घायलों की अथक सेवा करने के लिए सम्मानित करने के प्रस्तावों को उसने अस्वीकार कर दिया ।

अब संसार भर में शान्ति हो गई । १९१९ में मेरी ने रेडियम की प्रयोगशाला के प्रमुख का पद स्वीकार कर लिया । लड़ाई प्रारंभ होने के कारण रुका हुआ खोज का काम फिर प्रारंभ हो गया ।

मेरी अपनी दोनों पुत्रियों के भविष्य को सवांरने में दत्त-चित्त हो गईं । बड़ी बेटी आइरीन ने भौतिक-

विज्ञानी बनने का निश्चय किया। छोटी बेटी ईव संगीतज्ञा बनना चाहती थी। वह अपने अध्ययन में मग्न हो गई।

१९१९ की गर्मियों की छुट्टियां मनाने के लिए मां-बेटियां ब्रिटेनी के समुद्र तट पर गईं और खूब मनोरंजन किया।

एक बार एक अमरीकी महिला श्रीमती मैलोन मेरी क्यूरी से मिलने आई। यह सन् १९२० की बात है। बातों में उसे मालूम हुआ कि रेडियम की खोज से आर्थिक लाभ उठाने की बात मेरी ने अस्वीकार कर दी है और मेरी के पास अपना रेडियम भी नहीं है। इस महिला ने मेरी से पूछा कि आप कौन-सी वस्तु उपहार स्वरूप लेकर प्रसन्नता का अनुभव करेंगी ?

मेरी ने कहा, "मुझे अपने शोध-कार्य के लिए एक ग्राम रेडियम की आवश्यकता है किन्तु वह इतना महंगा है कि मैं उसे कभी भी नहीं खरीद सकती।"

इस महिला ने अमरीका लौटकर मेरी को एक ग्राम रेडियम भेंट करने के लिए चन्दा इकट्ठा करना प्रारंभ कर दिया। एक वर्ष के भीतर उसने इतनी राशि जमा कर ली कि एक ग्राम रेडियम खरीदा जा सके।

अमरीकी महिलाओं का आग्रह था कि इस भेंट को स्वीकार करने के लिए मेरी स्वयं अमरीका पधारें। उन्होंने आइरीन और ईव को भी अपनी मां के साथ अमरीका आने के लिए निमंत्रित किया। मई १९२१ में श्रीमती क्यूरी अपनी पुत्रियों के साथ अमरीका गईं। अमरीका-वासियों ने मेरी का बड़ा स्वागत-सत्कार किया। जगह-जगह उन्हें पुरस्कार, उपाधियां तथा पदक प्रदान किए गए।

२० मई को अमरीकी राष्ट्रपति हार्डिंग ने अपने राजकीय निवास स्थान ह्वाइट हाउस में श्रीमती क्यूरी को एक ग्राम रेडियम भेंट किया।

राष्ट्रपति ने मेरी को श्रेष्ठ मानव, आदर्श पत्नी और आदर्श माता कहकर सम्बोधित किया।

इस रेडियम को मेरी ने अपनी निजी-सम्पति नहीं बनाया। इसे प्रयोगशाला को सौंप दिया। इसके बाद अमरीका के दर्शनीय स्थानों का भ्रमण किया। २८ जून को वे पेरिस के लिए लौट पड़ीं।

मेरी का यश संसार में फैल चुका था। उन्होंने कई देशों की यात्रा की।

मेरी को अपनी मातृभूमि पोलैंड का सदा ध्यान रहता। ब्रोन्या की सहायता से मेरी स्क्लोदोवस्की

क्यूरी रेडियम संस्थान के लिए धन इकट्ठा हो गया। १९३२ में पोलैंड के राष्ट्रपति ने इस संस्थान का उद्घाटन किया। इस अवसर पर मेरी भी उपस्थित थीं।

फ्रांस ने मेरी को चिकित्सा अकादमी का सदस्य बना दिया था और चार लाख फ्रांक (फ्रांसीसी सिक्का) की राष्ट्रीय पेंशन दी थी।

अब मेरी धन की चिन्ता से मुक्त थीं। आइरीन प्रयोगशाला में उनकी प्रमुख सहायक थी। ईव संगीत के अभ्यास में लगी रहती। मां-बेटियों के दिन मजे में कट रहे थे।

आइरीन का विवाह रेडियम प्रयोगशाला के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता फ्रेडरिक जूलियट के साथ हो गया।

मेरी की आंखें तो पहले से ही खराब हो चली थीं। वे चार बार आंखों का आपरेशन करवा चुकी थीं।

बढ़ती हुई अवस्था, संघर्ष पूर्ण जीवन, पति का बिछोह, इन सब के कारण मेरी क्यूरी का स्वास्थ्य गिर रहा था। डाक्टरों ने विश्राम करने की सलाह दी पर मेरी ने काम की धुन में उसे भी अनसुना कर दिया।

मई, १९३४ को उन्हें प्रयोगशाला में ही बुखार चढ़ गया। फिर वे बिस्तर से नहीं उठीं। बड़े-बड़े डाक्टरों ने देखा पर किसी बीमारी के लक्षण दिखाई

नहीं दिए। अन्त में एक्स-रे लेने पर फेफड़ों में कुछ खराबी जान पड़ी। डाक्टरों ने सैनिटोरियम में जाने की सलाह दी। वे इन्हीं दिनों एक महत्वपूर्ण पुस्तक लिखकर समाप्त कर चुकी थीं। उसके प्रकाशन के सम्बन्ध में उन्होंने आइरीन और उसके पति को आवश्यक बातें समझाईं। प्रयोगशाला के कार्य के बारे में भी बताया।

वे दिनों दिन अधिक दुर्बल होती गईं। सैनिटोरियम जाने के लिए दोबारा डाक्टरों से सलाह ली गई।

इस यात्रा में मेरी को बहुत कष्ट हुआ। स्टेशन पहुंचने पर वे अचेत हो गईं। यहां स्विटज़रलैंड के डाक्टरों ने उनकी परीक्षा की और बताया कि फेफड़े तो ठीक हैं किन्तु रक्त-प्रवाह में गड़बड़ है। डाक्टर इस निश्चय पर पहुंचे कि अब ये अधिक दिन नहीं जी सकतीं किन्तु यह बात उन्होंने मेरी को नहीं बताई। ईव को भी उन्हें बताने से रोक दिया।

४ जुलाई, १९३४ को प्रातः मेरी की हृदयगति रुक गई। सैनिटोरियम के संचालक ने उनकी मृत्यु के कारणों पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि मेरी की मृत्यु रेडियम के साथ प्रयोग करते रहने के कारण हुई।

श्रीमती मेरी क्यूरी उन्हीं विघटनाभिक पदार्थों की शिकार बन गईं, जिनकी खोज उन्होंने व उनके पति ने की थी।

विश्व-प्रसिद्ध इस वैज्ञानिक महिला की मृत्यु का समाचार तुरन्त सारे संसार में फैल गया। विज्ञान जगत में गहरे शोक की लहर दौड़ गई। मेरी के शिष्य व सहयोगी फूट-फूट कर रो पड़े। उन्हें वहीं दफनाया गया जहां उनके पति को दफनाया गया था।

मृत्यु से पूर्व जो पुस्तक मेरी ने लिखी थी, वह एक वर्ष बाद प्रकाशित हो गई। इसका नाम था : विघटनाभिकता।

मेरी मर कर अपने यशस्वी कार्यों के कारण अमर हो गईं। ऐसी प्रतिभा की धनी महिला युग में कोई एक होती है। उन्होंने विज्ञान में नए युग का श्रीगणेश किया था।